# तुलसी सन्देश

आध्यात्मिक एवं साहित्यिक

त्रयमासिक पत्रिका

## श्री ग्रवध विशेषांक

### श्रीमानस सेवा समिति ग्रयोध्या

द्वारा प्रकाशित

श्री तुलसी जयन्ती समारोह

वर्ष २ अगस्त १९८० अंक-१

# शुभ सन्देश

गवर्नर

राज भवन
लखनऊ
जुलाई ३०, १९८०

सत्यमेव जयते
उत्तर प्रदेश

अवध प्रदेश भारतीय राष्ट्र का सर्वाधिक देदीप्यमान अध्याय है। वह न केवल भारतीय साहित्य, इतिहास व संस्कृति का आदि स्रोत है, वरन् सार्वभौम, शाश्वत मूल्यों का प्रथम उच्छ्वास भी है। जब तक हम अवध प्रान्त के सांस्कृतिक आदर्शों का पठन-पाठन करते रहेंगे, हमारा राष्ट्र अक्षुण्ण तथा अमर रहेगा।

मुझे यह जान कर हर्ष है कि 'श्री अयोध्या, जी श्री मानस सेवा समिति', अयोध्या, द्वारा प्रकाशित "तुलसी सन्देश" आगामी तुलसी जयन्ती के शुभ अवसर पर "अवध विशेषांक" के रूप में प्रकट होने जा रहा है तथा उसकी लोकप्रियता के लिये मेरी हार्दिक शुभ कामनायें।

च० प्र० ना० सिंह

# शुभ कामना

एस० दास

अ० शा० प० सं० मेमो/आ० लि०
जिलाधिकारी निवास,
फैजाबाद।
दिनांक जून २७, १९८०

प्रिय महोदय,

मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई है कि श्री मानस सेवा समिति अयोध्या द्वारा 'तुलसी संदेश' पत्रिका का विशेषांक प्रकशित होने जा रहा है।

२— कृपया इस अवसर पर मेरी शुभ कामना स्वीकार करें।

भवदीय,
(एस० दास)

श्री बांके बिहारी गुप्त,
संयोजक,
मानस सेवा समिति,
मोहन मन्दिर,
अयोध्या,

# सम्पादकीय

मर्यादा पुरूषोत्तम श्री राघवेन्द्र सरकार की अनुकम्पा से तुलसी सन्देश पत्रिका अपने द्वितीय वर्ष में पदार्पण करती हुई श्री तुलसी जयन्ती समारोह पर "श्री अवध विशेषांक" आपके कर कमलों में प्रस्तुत करती है।

प्रस्तुत अंक में अयोध्या के आध्यात्मिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं वैदिक रूपों का स्पष्टी करण साथ ही तुलसी साहित्य मीमांसा का चित्रण मार्मिक रहस्यात्मक भूमिकाओं को प्रकाशित करने का स्वल्प प्रयास किया गया है. जिसमें जिन संत, महात्माओं, महापुरुषों, लेखकों का हार्दिक सहयोग मिला है वे सभी वंदनीय हैं।

यह विशेषांक कृशकाय रूप में अर्थाभाववशात प्रस्तुत करते हुये हमें हर्दिक खेद है। जिन महानुभावों के लेखादि इस वार अप्रकाशित रह गये हैं वे हमें अपना समझकर तथा एक धार्मिक संस्थान का ध्यान रखते हुये क्षमा: करेंगे। आवश्यकता है कि तुलसी सन्देश पत्रिका में तुलसी साहित्य सम्बन्धित नवीन गवेषित सामग्रियों के साथ आध्यात्मिक लेखों की जिससे समाज में एक नवीन दिशा प्रदान करने में आपका आशीर्वाद प्राप्त करते हुये सफलीभूत रहें। जिनके आर्थिक योगदान मिले हैं वे सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

अयोध्या धाम के प्रसाद स्वरूप इस अंक को सप्रेम आप अपना ही समझकर सुधार करते हुंये रसास्वादन करेंगे। आपका आत्मतोष ही हमारे लिये एक शक्तिमान सम्बल प्रदान कर सकेगा।

श्री मानस सेवा समिति द्वारा प्रकाशित इस पत्रिका को प्रथम वर्ष में प्राय: घाटे में ही चलाना पड़ा है, संयोगवशात स्वजनों की हार्दिक प्रेरणाओं से यह अंक आपके सम्मुख है जिसका श्रेय भोलानाथ केसरवानी (इलाहाबाद), परम पूज्य श्री प्रेमकला जी महाराज (श्री दिव्यकला कुंज नयाघाट), परमादरणीय महान्त श्री रामसूरत शरण जी महाराज (श्री सदगुरुसदन गोलाघाट अयोध्या) तथा डॉ० राजनारायण मिश्र को प्राप्त है जिनके हम सदैव आभारी हैं।

अनुरोध है कि श्री भगवद् भक्त जन इस सुकार्य में अपना अत्यधिक योगदान प्रदान करेंगे जिससे तुलसी–सन्देश अपनी मूल अवधारणाओं में लोकप्रियता प्राप्त कर सकेगी ऐसी मेरी भावना है।

सीयराम मय सब जग जानी, करहुँ प्रनाम जोरि जुग पानी।-सम्पादक

# तुलसी का सनातन बोध

डॉ० राजनारायण मिश्र

लगभग पाँच सौ वर्षों से अधिकतर भारतीय जनमानस प्रभावित करने वाले गोस्वामी तुलसीदास निश्चय ही संसार के महानतम् मन्द्रग्रस्ताओं में एक हैं। संसार का कोई भी महान् कबि इतने दीर्घ काल तक अपने यशस् शरीर से जीवित नहीं रह सका। यदि गम्भीरता से इन तथ्यों पर विचार किया जाय जिनसे किसी भी महाकवि को इतना बड़ा गौरव प्राप्त होता है तो उन अनेक तथ्यों में सबसे बड़ा तथ्य उसके सनातन बोध का होता है।

बोध कई प्रकार के होते हैं। जैसे युग बोध और समसामयिक बोध। समसामयिक बोध क्षणिक और युग बोध स्थाई होते हैं। यही कारण है कि जन कवियों में समसामयिक बोध होते हैं उनकी अवधि नपी–तुली होती है और जो युग बोध को चित्रित करने वाले महाकवि हैं वे अधिक समय तक स्मरण किये जाते हैं। गोस्वामी जी युग बोध की सीमाओं को पार कर सनातन बोध के स्तर तक पहुँच चुके थे यही कारण है कि वे सदैव स्मरण किये जायेगे और उनके प्रति श्रद्धाँजलियाँ अर्पित की जाती रहेगी।

गोस्वामी जी ने जो जीवन जिया था तथा अपने समय का जो चित्र अपनी आँखों से देखा था उसका अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने मानस में सर्वत्र चित्रण किया है। इनके निर्वासित राम में महाराणा प्रताप का चित्र है। उनके रावण और कुम्भकर्ण में तत्कालीन अत्याचारी, क्रूर शासकों का चित्र है। उनके राज्य–त्याग में तत्कालीन उत्तराधिकारों के नियमों की चुनौती है। उनके 'अहिल्योधार' प्रसंग में नारी उद्धार की अनुपम प्रेरणा है। उनके कलियुग प्रसंग में आगे आने बाली पीढ़ी तक के लिए मार्मिक संदेश है। उनका 'रामराज्य' वर्णन एक आदर्श राज्य की परिकल्पना बन गया है। ये सारे प्रसंग गोस्वामी जी के युग बोध के परिचायक हैं किन्तु इससे आगे बढ़ कर जब वे सनातन बोध को चित्रित करने लगते हैं तब वे प्रकाश के कवि बन जाते हैं। इसी स्थल पर वे ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, सत्य, अहिंसा, प्रेम बन्धुत्व, वेद, उपनिषद और पुराणों से गृहीत मर्मिक छवियों का उद्घाटन करने लगते है। ग्रन्थ के प्रारम्भ में ही उन्होंने वाग् देवी सरस्वती की बन्दना की है क्योंकि उन्हें राम भक्ति का संदेश काव्य के माध्यम से देना था। इन्हें समाज में मंगल की स्थापना करनी थी इसलिए सरस्वती के साथ उन्होंने विनायक की भी बन्दना की है।

# अयोध्या के अतीत तथा वर्तमान स्वरूप

ले०—स्वामी श्री सीताराम शरण जी महाराज श्री लक्ष्मण किला अयोध्या

अथर्व वेद में अयोध्या को देवताओं की पुरी कहा गया है:—

'अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या'

आठ चक्र नवद्वारों वाली अयोध्या देवताओं की पुरी है। वेदावतार श्रीवाल्मीकीय रामायण में यहाँ के निवासियों में अतुल ऐश्वर्य का वर्णन मिलता है।

कोशलो नाम मुदित: स्फीतो जनपदो महान्।
विनविष्ट: सरयूतीरे प्रभूत धनधान्यवान्॥
अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोकविश्रुता।
मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मितास्वयं॥
आयता दश च द्वे च योजनानि महापुरी।
श्रीमती त्रीणि विस्तीर्णा सुविभक्तकहापथा॥

(वाल्मी० १। ५-७)

अत्यन्त समृद्ध कोशल देश में लोक प्रसिद्ध श्रीअयोध्या पुरी विद्यमान है। यहाँ के निवासी अत्यन्त सन्तुष्ट एवं धन धान्य से परिपूर्ण थे। आदि राजा श्रीमनुने अपने संकल्प से इस पुरी का विस्तार किया था। तीन योजन (बारह कोष) चौड़ी तथा बारह योजन (अड़तालिश कोश) लम्बा अयोध्या का मूल नगर था। उप नगरों के साथ इस पुरी का विस्तार अनेकों योजन था।

'महापुरी मूल नगरम् उपनगर साहित्येत्वनेकयोजनास्तीति भाव:—भूषणटीका।

तभी तो प्रयाग से ही अयोध्या के शिखरों और पताकाओं के दर्शन होते रहते थे।

कोशल देश का नाम है, जिसमें अयोध्या पुरी बिराजमान है। कोशल देश भी दो हैं—दक्षिण कोशल, दूसरा उत्तर कोशल, अयोध्या उत्तर कोशल देश में है। उत्तर कोशल में अयोध्या थी यह भागवत में सुस्पष्ट है—

य उत्तराननयत् कोशलान्दिवम् ।

(भा० ५)

भागवतकार कहते हैं—देवता, मनुष्य एवं पशु आदि को भी श्रीराम जी का ही भजन करना चाहिए, क्यों कि श्रीराम जी सुकृतज्ञ हैं थोड़ा भजन को बहुत मानते हैं। तभी तो उत्तर कोशलवासी (अयोध्यावासी) समस्त पशु तृण आदि को अपने साथ दिव्यधाम ले गये।

महर्षि बाल्मीकिने लिखा है—

तस्यां पुर्यामयोध्यायां वेदवित्सर्वसंग्रहः
दीर्घदर्शी महातेजाः पौरजानपदप्रियः
... ... ... ... ...
यस्यां दशरथो राजा वसन् जगदपालयत्

(१। ।१–४)

अर्थात् उस अयोध्या पुरी में राजा दशरथ जगत् का पालन करते थे! वे वेदों के ज्ञाता थे, महर्षि के तुल्य थे राजर्षि के रूप में तीनों लोकों में प्रसिद्ध थे।

उस अयोध्या में कोई भी मनुष्य कामी, कायर, क्रूर नहीं थे। मूर्ख तथा नास्तिक एक भी मनुष्य नहीं था। सभी स्त्री पुरुष धर्म शील एवं महर्षियों के समान निर्मल थे। माला कुण्डण मुकुट के बिना कोई भी मनुष्य नहीं था। सभी अयोध्या निबासी विशिष्ट भोगों से पूर्ण थे।

इस प्रकार अयोध्यावासियों के आदर्श जीवन का विशद वर्णन महर्षिने बालकाण्ड के पांच से छठे सर्ग तक अति विस्तार से किया है। बाल्मीकि रामायण अयोध्या काण्ड के प्रारम्भ में अयोध्यासियों के उत्कृष्ट प्रेम का सम्यक् दर्शन होता है। चक्रवर्ती श्री दशरथ जी ने एक महती सभा बुलाई और सभी से पूछा कि श्रीराम भद्र को युवराज बनाने की मेरी इच्छा है, आप सब विचार कर अपनी स्वीकृति दें।

श्री दशरथ जी की बात सुनते ही सभी सभासद प्रसन्न होकर हर्षनाद करने लगे। उस हर्षनाद से सभामंडप गूंज उठा सभी ने एक स्वर से कहा—राजन्! आप अब अत्यन्त बृद्ध हो गये हैं अतः श्रीराम जी को युवराज अवश्य बना दें।

श्री दशरथ जी ने कहा–श्रीराम जीं अत्यन्त सुकुमार हैं वे इतना विशाल राज्य भार कैसे बहन कर सकेंगे ? इसका उत्तर देते हुये अयोध्यावासी कहते हैं।

इच्छामो हि महाबाहुं रघुबीरं महाबलम्।
गजेन महता यान्तं रामं छत्राबृताननम्॥

(वाल्मी० २।२।२२)

हे राजन ! हम लोग राज्य की रक्षा के लिये श्रीराघवेन्द्र को राजा नहीं बनाना चाहते हैं, हम परम सुकुमार श्रीरामभद्र को राज्यभार बहन के लिए युवराज नहीं बनाना चाहते हैं हम तो सपरिवार उनके सौंदर्य माधुर्य का रसास्वादन करना चाहते हैं। हम सब यही चाहते हैं कि महाबाहु श्रीरघुबीर युवराज बन कर विशाल हाथी पर सवार होकर हमारे महलों की गलियों से यात्रा करें। हाथी पर जब वे सवार होंगे तब सिर पर लगे हुए छत्र से उनकी शोभा और बढ़ जायगी। साथ ही दृष्टि दोष बचाने के लिये भी छत्र से उनका मुख आच्छादित करना चाहते हैं छत्र लगी मुक्ता की झालरों के बीच कभी कभी जब रुक रुक कर दर्शन होगा तब और भी दर्शन की लालसा बढ़ेगी।

अयोध्यावासियों ने कहा राजन् ! आप के पुत्र श्रीराम भद्र में इतने कल्याण गुण हैं कि हम सब उनके गुणों में अत्यन्त अशक्त हो गये।

बहवो नृप कल्याणगुणाः पुत्रस्य सन्ति ते।

इक्ष्वाकुबंश में उत्पन्नसभी महापुरुषों से श्रीराम भद्र विललक्षण हैं। इनका स्वभाव अत्यन्त कोमल है।

व्यसनेषु मनुष्याणां भृशं भवति दुःखितः
उत्सवेषु च सर्वेषु पितेव परितुष्यति॥

अपने परिवार के नहीं किन्तु नीच से नीच, बाल युवा बृद्ध के दुख में श्रीराम भद्र अत्यन्त दुखी हो जाते हैं। "भृशं भवति दुःखितः" का तात्पर्य यह है कि आश्रितों के दुख से इतने अधिक दुखी हो जाते हैं कि आश्रितों के दुख का कारण अपनी असावधानी समझने लगते हैं। प्रभु सोचते हैं कि यदि मैं ठीक से इसका पालन किया होता तो क्यों दुखी होता। उत्सवों में सभी के गृहों में जाते हैं और पिता के समान सन्तुष्ट होते हैं।

स्मित पूर्वाभिभाषी च।

मन्दहास के साथ सर्व प्रथम दूसरों से स्वयं कुशल प्रश्न पूछते हैं जिससे उनसे बातें करने में किसी साधारण मनुष्य को संकोच नहीं हो।

देवता, मनुष्य सभी श्रीरामजी के बल आयु की वृद्धि की कामना करते रहते हैं।

स्त्रियो बृद्धास्तरुण्यश्च सायं प्रातः समाहिता।
सर्वान् देवान्नमश्यन्ति रामस्यार्थे मनस्विनः॥

बृद्धा एवं तरुणी स्त्रियां सायं प्रातःकाल स्नान आदि से निवृत होकर सावधान होकर श्रीराम जी के लिये सभी देवताओं को नमस्कार करती हैं।

सभी देवताओं को नमस्कार इसलिए करती हैं कि कोई देवता नाराज न हो जाय। एक दो देवता शायद कल्याण करने में असमर्थ हों अतः सब मिलकर कल्याण अवश्य करेंगे। वृद्धा तथा तरुणानों ये दोनों स्त्रियां एक प्रकार से परवश हैं बृद्धा तो दूसरों के सहारे स्नान आदि कर देव मंदिरों में प्रार्थना करती हैं। तरुणी स्त्रियां अपने सौंदर्य के भार से ही तीनों काल स्नान कर देवालयों में जाने में असमर्थ रहती हैं। किन्तु श्रीराम जी के लिये सभी सदा सावधान होकर देवताओं से प्रार्थना करती रहती हैं। यद्यपि देवतागण श्रीराम जी से रक्षित हैं श्री राम जी की रक्षा करने में असमर्थ रहती हैं। किन्तु प्रीति की रीति बड़ी विलक्षण होती है। प्रेमियों के समक्ष प्रभु का ऐश्वर्य सदा तिरोहित (छिपा) रहता है, उनके समक्ष तो प्यारे के माधुर्य का सागर ही उमड़ता रहता है। अतः प्रीति की दृष्टि से यह प्रभु के लिये मंगलकामना अत्यन्त प्रसंशनीय है।

श्री मानस में भी अयोध्या वासियों ने चित्रकूट में श्रीराम जी के मंगल के लिए पंचदेवों की उपासना की है।

करि मज्जन पूजहिं नर नारी।
गनप गौरि त्रिपुरारि तमारी॥
रमारमन पद वंदि बहोरी।
बिनवहिं अंजुलि अञ्चल जोरी॥
राजा राम जानकी रानी।
आनन्द अवधि अवधि रजधानी॥

इस प्रकार पंचदेवों की उपासना अपने लिए यदि करते तो परत्व की दृष्टि से अनुचित था किन्तु प्रभु के मंगल के लिये उपासना

माधुर्य दृष्टि से प्रशंसनीय है। वाल्मीकीय रामायण तो माधुर्य प्रधान ग्रन्थ है अतः श्री किशोरी जी श्री लक्ष्मण जी सभी ने प्रभु के लिये मंगल कामना की है।

श्रीराघवेन्द्र के विरह में श्री अयोध्या पुरी के वृक्ष भी सूख गये–

विषय ते महाराजा रामव्यसन कर्शिता
अपिवृक्षा परिम्लानाः सपुष्पांकुरकोरकाः
उपतप्तोदका नद्यः पल्वलानि सरांसि च
परि शुष्क पलाशानि वनान्युपबनानि च

श्री सुमन्तजी श्रीदशरथजी से कह रहे हैं कि महाराज ! आपके राज्य में श्रीरामभद्र के वियोग में पुष्प एवं कलिका के साथ बृक्ष भी शुष्क हो रहे हैं। नदियों के जल उष्ण हो गये हैं। बन उपवन सभी श्रीराम के वियोग में सूख रहे हैं।

लौकिक बृक्ष जल से हरे भरे रहते हैं तथा जलाभाव में सूख जाते हैं, किन्तु श्री अयोध्यापुरी के बृक्ष श्रीरामभद्रजू के संयोग से हरे – भरे रहते हैं तथा श्रीराम वियोग में सब सूख जाते हैं। यह श्रीअवधधाम की महिमा है इसकी चर्चा समस्त रहस्य ग्रन्थों में पायी जाती है। पञ्चस्तवीकार ने भी लिखा है।

बृक्षाश्च तान्तिमलभन्त भवद्वियोगे

यद्यपि आपामर देवता पर्यन्त जीवों पर श्रीरामभद्र की कृपा समान रूप से रहती है किन्तु अयोध्यावासियों पर विशेष अनुग्रह प्रसिद्ध है।

अति प्रिय मोहिं यहां के बासी।
मम धामदा पुरी सुख रासी॥

पञ्चस्तवीकार भी कहते हैं–

ये धर्ममाचरितुमभ्यसितुं च योगं,
बोद्धं च किञ्चन न जात्वधिकार भाजः।
तेऽपि त्वदाचरितभूतलबन्ध गन्धाद्,
बन्धातिगाः परगतिं गमितास्तृणाद्याः॥

हे नाथ ! जो लोग धर्माचरण के योग्य नहीं थे, न तो योग एवं ज्ञान के अधिकारी ही थे वे पशु पक्षी तृण आदि भी आपकी लीला भूमि के निवासी होने के कारण परमगति प्राप्त कर गये।

इसी प्रकार श्रीवत्साङ्कमिश्र कुछ प्रश्न करते हैं–

त्वमामनन्ति कवयः करुणामृताब्धे
ज्ञान क्रियाभजनलभ्यमलभ्यमन्यैः ।
एतेषु केन वरदोत्तर कोलस्थाः
पूर्व सदूर्वमभजन्त हि जन्तवस्त्वाम् ॥

हे नाथ ! वेद शास्त्रों के ज्ञाता मुनिजन सदा से उपदेश देते आ रहे हैं कि भगवान् की प्राप्ति कर्म, ज्ञान एवं भक्ति से ही होती है अन्य साधनों से नहीं। किन्तु अयोध्या वासी कीट, तृण आदि ने इनमें से कौन योग किये जो उनको आप अपने साथ निजधाम ले गये ? स्पष्ट है कि अयोध्यावास के प्रताप से ही वे परम पद के अधिकारी हुये। तभी तो मानसकार कहते हैं।

चारि खानि जगजीव अपारा।
अवध तजे तनु नहिं संसारा ॥

श्रीमद्भागवतकार श्रीराम जी की उपासना की महत्ता बतलाते हुये श्री अवध की महिमा स्वीकार करते हैं।

सुरोऽसुरोवाप्यथवानरोनरः,
सर्वात्मना यः सुकृतज्ञमुमम् ।
भजेत रामं मनुजाकृतिं हरिं,
य उत्तराननन्यत्कोसलान् दिवमिति ॥
(भा० ५।१९।८)

श्रीहनुमानजी पंचम स्कन्ध में श्रीरामजी की उपासना की महत्ता बतलाते हुए कहते हैं कि–

देवता हो या असुर नर हो या बानर सभी को श्रीरामचन्द्र की उपासना करनी चाहिए। क्योंकि थोड़े से उपकार में श्रीरामजी प्रसन्न हो जाते हैं। तभी तो उत्तर कोशलवासी समस्त जीवों को वे अपने साथ ले गये।

मानस में श्रीपार्वती जी ने इस चरित को आश्चर्य के साथ पूछा है–

बहुरि कहहु करुनायतन कीन्ह जो अचरज राम।
प्रजा सहित रघुवंसमनि किमि गवने निज धाम ॥

अर्थात् श्रीराम जी अयोध्यावासी अपनी प्रजाओं के साथ अपने निज-धाम ( साकेत ) गये, यह अत्यन्त आश्चर्य चरित किया है। आज तक किसी अवतार के चरित में ऐसी आश्चर्य लीला देखने सुनने में नहीं आई है। भागवतकार कहते हैं–

स यैः स्पृष्टोऽभिपृष्टो वा संविष्टोऽनुगतोऽपि वा ।
कोशलास्ते ययुः स्थानं यत्र गच्छन्ति योगिनः ॥
(भा० ६।११।२२)

जिन्होंने भगवान् श्रीराघवेन्द्र सरकार का दर्शन किया, स्पर्श किया अथवा उनके साथ थोड़ी दूर भी अनुगमन किया ( पीछे पीछे चले ) वे सभी तथा कोशल देश के निवासी भी उसी दिव्यधाम में गये, जहाँ बड़े बड़े योगी जन साधना के द्वारा जाते हैं। यह अयोध्यावास का ही महत्व है कि योगि दुर्लभ श्रीरामधाम साधारण जन को भी प्राप्त हो जाता है।

महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं कि।

भगबान् श्रीराम के परमधाम यात्रा के समय स्थावर जंगम सभी जीव उनके साथ हो गए। ऐसा एक भी जीव नहीं बचा जो श्रीराम जी के साथ नहीं गया हो।

तिर्यग्योनिगताश्चैव सर्वे राममनुव्रताः ।

जब भगवान् श्रीराम समस्त प्रजाओं के साथ अपने दिव्यधाम जाने लगे तब इस आश्चर्यमय दृश्य को देखने के लिए देवताओं के साथ ब्रह्मा जी वहाँ उपस्थित हो गए। आकाश मण्डल देवताओं के विमानों से खचाखच भर गया। सभी देवता पुष्पों की वर्षा कर रहे थे। श्रीब्रह्माजी ने प्रभु से कहा-

आगच्छ विष्णो भद्रं ते दिष्ट्या प्राप्तोऽसि राघव,
भ्रातृभिः सह देवाभैः प्रविशस्व स्विकां तनुम् ।
यामिच्छसि महाबाहो तां तनुं प्रविशस्विकाम् ॥
वैष्णवीं तां महातेजो यद्वाकाशं सनातनम् ।
(वाल्मी० ७।११०।८-९)

व्यापक स्वरूप श्रीराम ! अपने भ्राताओं के साथ अपनी इच्छानुसार अपने स्वरूप में प्रविष्ट हों अथवा दिव्यधाम साकेत में चलकर आप विराजें। तात्पर्य यह है कि प्रभु अपनी इच्छा से लीला का संवरण करें।

त्वं हि लोकगतिर्देव! न त्वां केचित्प्रजानते ।
ऋते मायां विशालाक्षीं तव पूर्वपरिग्रहाम् ॥

हे देव ! आप समस्त जीवों के एकमात्र आश्रय हैं, आपको कोई नहीं जानता है। जिनका सदा आपका संग रहता है ऐसी अनपायिनी श्रीजानकीजी केवल आपको जानती हैं।

ब्रह्माजी की प्रार्थना सुनकर श्रीविग्रह के साथ ही ( छोड़कर नहीं ) परधाम चले गए।

विवेश वैष्णवं तेजः सशरीरः सहानुजः ।
[ ७ ११०। १२ ]

प्रभु ने अपनी प्रजाओं के लिए भी ब्रह्मा से अनुमोदन चाहा ब्रह्माजी ने कहा नाथ ! आपकी कृपा से ये सभी आपकी प्रजा सान्तानिक ( साकेत ) लोक जायेगे—

लोकान् सन्तानकान्नाम यास्यन्तीमे समागताः ।
( वा० ७।११०।१८)

फिर क्या था सभी लोग गोप्रतार घाट श्री सरयू में स्नान कर दिव्य रूप धारण कर विमान पर बैठकर प्रभु के साथ साकेत चले गये ।

अयोध्या से ४ मील पर गोप्रतार घाट है । आज कल लोग इसको गुप्तार घाट कहते हैं साथ ही गुप्तार का अर्थ करते हैं जहां श्रीरामजी गुप्त हुए थे, यह अनुचित है । गुप्तारघाट तथा इसका अर्थ दोनों गलत है । श्रीराम जी गुप्त नहीं हुये थे बल्कि ऊपर के लोक गए थे । अयोध्यावासी सभी प्रजा भी विमान पर बैठकर ऊपर सान्तानिक लोक गये हैं अतः घाट का शुद्ध नाम गोप्रतार है । गोप्रतार का अर्थ है जहां गायें पार होती हैं । थोड़ा जल होने के कारण वहां गायें पार जाकर घास चरती थी वाल्मीकि महर्षि लिखते हैं—

तथोक्तवति देवेशे गोप्रतारमुपागताः ।
भेजिरे सरयूं सर्वे हर्षपूर्णाश्रु विक्लवाः ॥
( वा ७।११०।२८ )

अर्थात् ब्रह्माजी के वचन सुनकर सभी लोग आनन्दाश्रु पूर्ण नेत्र — हर्षातिरेक से गोप्रतार पहुँच गए तथा जैसे -जैसे स्नान करते गए वैसे— वैसे प्राकृत शरीर छोड़कर दिव्य शरीर से विमान पर बैठते गये ।

मानुषं देहमुत्सृज्य विमानं सोऽध्यरोहत ॥

पशु पक्षी कीट पतंग सभी सरयू जल के स्पर्श से दिव्य रूप धारण कर विमान पर बैठ गए ।

ततः समागतान् सर्वान् स्थाप्य लोकगुरूदिवि ।
जगाम त्रिदशैः सार्धं सदा हृष्टैर्दिवं महत् ॥
( वाल्मी० ७।११०।२८ )

अर्थात् सभीको दिव्यरूप में आये हुए देखकर श्रीराम भद्र ने विमान पर सभी को अपने साथ में बिठला कर नित्य धाम को चले गए ।

यहाँ 'सदा हृष्टैः त्रिदशैः ' यह विशेषण नित्य सूरियों की ओर संकेत करता है ऐसा भूषण टीकाकार कहते हैं । ( दिवम् ) से वैकुण्ठ ( साकेत )

समझना चाहिए—

दिवम् परमाकाशं वैकुण्ठम्
त्रिदशै र्नित्य सूरिभिः, सदा हृष्टै रिति विशेषणात् ॥

इस प्रकार वेदावतार श्रीमद्बाल्मीकीय रामायण में विस्तार पूर्वक चराचर प्रजाओं के साथ श्रीराघवेन्द्र की साकेत यात्रा का वर्णन है। चराचर प्रजाओं को नित्यधाम प्रदान कर श्रीराघवेन्द्रने असाधारण उदारता प्रकट की है, साथ ही अयोध्यावास मात्र से दिव्य धाम की प्राप्ति की सरलता का भी प्रकाशन किया है।

प्रभु की इस अकारण करुणा की प्रशंसा से समस्त शास्त्र एवं दिव्य प्रबन्ध भरे पड़े हैं।

श्री अयोध्यावास का महत्व है साकेत की प्राप्तिः—

राम धामदा पुरी सुहावनि।
लोक समस्त विदित जग पावनि॥

अयोध्यापुरी श्रीरामधाम को देने वाली है, समस्त लोकों में विदित है तथा जगत् को पवित्र करने वाली है।

श्रीअयोध्या के दो स्वरूप है एक माधुर्य तथा दूसरा ऐश्वर्य। माधुर्य अयोध्या तो चर्मचक्षुओं से भी देखी जाती है किन्तु इसके ऐश्वर्य रूप का दर्शन तो दिव्यदृष्टि से ही सम्भव है।

अवध प्रभाव जान तब प्रानी।
जब उर वसहि राम धनुपानी॥

धनुष बाण धारण किये हुए जब श्रीरामजी हृदय में निवास करें तभी अयोध्या की महिमा जानी जा सकती है।

जब श्रीरामजी हृदय में बसेंगे तब काम क्रोध आदि विकार हृदय से भाग जायेंगे, तभी श्री अवध का महत्त्व ज्ञात होगा।

तब लगि हृदय वसत खल नाना।
काम क्रोध मत्सर मद माना॥
जब लगि उर न बसत रघुनाथा।
धरे चाप सायक कटि माथा॥

भगवत् कृपा से दिव्य दृष्टि प्राप्त होने पर इसी माधुर्य मयी अयोध्यापुरी में दिव्य अयोध्या का दर्शन होने लगता है, स्वामी श्री युगलानन्यशरणजी श्रीरसिकअली जी प्रभृति सन्तों ने इसी अयोध्यापुरी को दिव्य रूप में देखा था।

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी इसी अयोध्यापुरी को दिव्य रूप में साक्षात्कार किया था तभी तो—

बहुरि कहहु करुनायतन कीन्ह जो अचरज राम।
प्रजा सहित रघुबंसमनि किमि गवने निज धाम॥

श्री पार्वती जो के इस प्रश्न का सुस्पष्ट उत्तर श्रीशंकर जी से नहीं दिलवाया। 'गये जहां शीतल अंवराई' से भले ही इस प्रश्न का गुप्त समाधान कर दिया गया हो किन्तु जिस प्रकार अन्य प्रश्नों के स्पष्ट एवं विस्तृत उत्तर दिये गये वैसा उत्तर नहीं दिया गया।

श्रीअयोध्या को छोड़कर श्रीरामजी का अन्य निजधाम की कल्पना गोस्वामीजी की उपासना के अनुकूल नहीं हैं। वे कहते हैं:—

उमा अवध बासी नर सकल कृतारथ रूप।
ब्रह्म सच्चिदानन्दघन रघुनायक जहं भूप॥

अर्थात् साधारण राजा के राज्य में परिवर्तन होते हैं किन्तु जहां सच्चिदानन्दघन श्रीरामजी राजा हों तथा जहां के निवासी प्रजा कृतार्थ रूप हों वहां परिवर्तन कैसे सम्भव हो सकता है।

श्रीरघुनाथजी ने निजमुख से श्रीअवध की महिमा, गाई है

सुनु कपीस अंगद लंकेसा
पावन पुरी रुचिर यह देसा॥
यद्यपि सब बैकुंठ बखाना।
वेद पुरान विदित जग जाना॥
अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ।
यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ॥

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम सत्यवादियों में शिरोमणि हैं। वाल्मीकीय रामायण में कैकेयी अम्बा से स्वयं कहा :—

अनृतं नोक्त पुर्वं मे न च वक्ष्ये कदाचन

मैंने आज से पूर्व कभी भी असत्य भाषण नहीं किया है, आगे भी असत्य भाषण नहीं करुँगा। श्रीरामजी सत्यवक्ता तथा दृढ़व्रती हैं ऐसा वाल्मीकि जी लिखते हैं :—

सत्य वाक्यो दृढ़ व्रतः।

श्री भागवत कार भी कहते हैं:—

ब्रह्मण्यः सत्यसंधश्च रामो दाशरथि यथा।

परीक्षित् जी ब्राह्मण भक्त एवं सत्यप्रतिज्ञ दाशरथि राम के समान थे अतः श्रीरामजी श्रीअवध को बैकुण्ठ से श्रेष्ठ कह रहे हैं इससे अधिक प्रमाण और क्या हो सकता है ?

मंत्र भाग में भी देवानां पूरायोध्या, से अयोध्या की महिमा प्रसिद्ध है। सनत्कुमार संहितान्तर्गत श्रीरामस्तवराज में श्रीयुधिष्ठिरजी ने श्रीनारदजी से तीन प्रश्न किये हैं।

'कि तत्वं कि परंजाप्यं कि ध्यानं मुक्तिसाधनम् ।'

पर तत्त्व क्या है, पर जाप्य क्या है तथा मोक्षप्रद ध्यान क्या है ? उत्तर में कहा गया है कि श्रीराम ही परतत्व हैं, श्रीराम मंत्र ही पर जाप्य हैं तथा श्रीसीताराम का ध्यान ही मोक्षप्रद ध्यान है ध्यान का वर्णन करते समय सर्व प्रथम अयोध्या का स्मरण किया गया है।

अयोध्या नगरे रम्ये रत्नमण्डप मध्यगे ।
स्मरेत्कल्पतरोर्मूले रत्न सिहासनं शुभम् ।
तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं नाना रत्नैम्च वेष्टित् ।
स्मरेन्मध्ये दाशरथिं सहस्त्रादित्य तेजसम् !
( रामस्तवराज )

सर्व प्रथम उपासक परम रमणीय अयोध्यापुरी का ध्यान करे तत्पश्चात् रत्न मण्डप का ध्यान करे, तत्पश्चात् कल्पतरु का तत्पश्चात् रत्न सिहासन का, तत्पश्चात् अनेक रत्नों से सुसजिज्जत अष्टदल कमल का ध्यान करे, वहीं पर हजारों सूर्य के तेज के समान श्रीरामजी का ध्यान करे। यह ध्यान बालक रूप श्रीरामजी का हैं क्यों कि आगे पिता के अङ्क में विराज मान श्रीराम जी का ध्यान है।

पितुरङ्कगतं राममिन्द्रनील मणि प्रभम् ।

इसी ग्रन्थ में दूसरा ध्यान श्री विदेहराजनन्दिनी के साथ करने को कहा गया है—

श्रीवैदेही सहितं सुरद्रुमतले हैमे महा मण्डपे । इत्यादि ।

इस प्रकार बालक रूप का ध्यान हो अथवा युगल रूप का ध्यान हो, ध्यान करने से पूर्व श्रीअयोध्या का स्मरण परम आवश्यक है इसलिए भाष्यकार ने लिखा है।

'आदौ रम्यं अयोध्या नगरं स्मरेत् '।

अर्थात् प्रथम रमणीक अयोध्या नगर का ध्यान करना चाहिए।

ध्यान मंजरी में श्री अग्रस्वामी जी महाराज रसमालिका में श्रीकरुणासिंधुजी महाराज, बृहत ध्यानमंजरी में श्रीबालअली जी महाराज, श्रीयुगलविनोद विलास में स्वामी श्रीयुगलानन्य शरण महाराज प्रभृति आचार्यों ने इसी क्रम से विस्तार पूर्वक अपने अपने ग्रन्थों में ध्यान का वर्णन किया है।

इस प्रकार वेद से लेकर रामायण पर्यन्त श्री अयोध्या की महिमा का वर्णन समान रूप से सर्वत्र मिलते हैं।

गोस्वामीजी ने भी विश्ववन्द्य श्रीमानस की रचना इसी पुनीत पुरी में की थी।

नवमी भौमवार मधुमासा।

अवधपुरी यह चरित प्रकासा।

श्रीरामचरित मानस की प्रथम टीका आचार्यप्रवर श्री करुणासिंधु महाराज ने अयोध्या में ही कियाहै। तब से लेकर आज तक अयोध्याजी में श्री मानस के अध्ययन-अध्यापन गायन एवं कथा की अक्षुण्ण परम्परा चली आरही है। यवनों के शासन काल में अयोध्या को उचित सम्मान नहीं मिला। इस लिए गोस्वामी श्रीतुलसीदास जी महाराज ने अयोध्या छोड़कर काशी में निवास किया।

विन्दु प्रवर्तक श्री दीनवन्धु श्रीरामप्रसादाचार्य जी महाराज के समय से अयोध्या में सन्तों का समागम प्रचुर मात्रा में होने लगा। श्रीकरुणा-सिंधु श्रीरामचरणदास जी महाराज के काल में अयोध्या में सत्संग, कथा प्रवचन आदि बड़े समारोह के साथ होने लगे।

१८५७ के युद्ध के पश्चात् स्वामी श्रीयुगलानन्यशरण जी महाराज का प्रभाव अंग्रेज अधिकारियों पर विशेष रूप से पड़ा। बावन वीघे की परिधि के साथ लक्ष्मणकिला का निर्माण हुआ। श्रीयुगलानन्य शरणजी महाराज जैसे असाधारण भजनानन्दी सिद्ध थे वैसे ही हिन्दी संस्कृत उर्दू फारसी आदि भाषाओं के अप्रतिम विद्वान् भी थे। यही कारण था कि अंग्रेज मुसलमान आदि भी श्रीस्वामीजी के भक्त थे।

स्वामीजी के काल में श्रीअयोध्या में चार सिद्ध थे।

स्वामी श्रीयुगलानन्यशरण जी महाराज श्रीलक्ष्मणकिला

बाबा श्री माधवदास जी उदासीन रानूपाली

पण्डित श्री उमापति त्रिपाठी जी नयाघाट,

स्वामी श्रीयुगलानन्यशरण जी महाराज के पटु शिष्य पण्डितराज

श्री जानकीवरशरण जी महाराज असाधारण सन्त हुए। इनके काल में श्री अयोध्या का वैभव लोकोत्तर बढ़ा। उनके दर्शनार्थ स्वामी श्री विवेकानन्द जी पधारे। स्वामी जी के दर्शन से स्वामी श्री बिवेकानन्द जी अत्यन्त प्रभावित हुए। उन्होंने लिखा है कि मैंने आज वास्तविक सन्त का दर्शन किया।

At the insitence of Akhandananda, the Swami next went to Ayodhya and to the Ashram of Jankivar Saran, a Sanskrit and Persian scholar, the Mahanta of a local temple with vast estates. The Swami was much impressed with his learning and spiritual fervour and remarked to his brother-disciple "I have seen a man, a real holy man !"

द लाइफ आफ स्वामी विवेकानन्द पृष्ठ १९६)

श्रीमिथिला प्रान्त में श्री वैष्णव धर्म प्रचार का श्रेयपण्डितजी महाराजस्वामी श्री जानकीवर शरण जी महाराज को हो है। स्वामी श्रीजानकीवर शरण जी महाराज के अनेक शिष्यों में दो प्रधान शिष्य हुए, एक स्वामी श्रीरामवल्लभा शरण जी महाराज सद्गुरुसदन गोलाघाट निवासी द्वितीय बाबा श्रीगोमतीदास जी महाराज हनुमत् निवास निवासी। इन दोनों महारुषों की शिष्य परम्पराओं से भारत वर्ष के प्रायः सभी प्रान्त प्रभावित हैं। विहार एवं उत्तर प्रदेश में तो लाखों की संख्या में यहां के अनुयायी हैं।

श्रीअयोध्या एवं मिथिला ये दोनों स्थानों में हजारों की संख्या में केवल विरक्त सन्तों के स्थान हैं। गोलाघाट निवासी स्वामी श्रीरामबल्लभा शरण जी महाराज के समय में भी श्री अयोध्या जी में अनेकों सिद्ध सन्त थे। जिनमें गोलाघाट के स्वामी श्रीरामवल्लभा शरण जी महाराज, श्री श्रीजानकी घाट निवासी पण्डित श्री रामबल्लभाशरण जी महाराज हनुमत् निवास के बाबा गोमतीदास जी महाराज माँझा के श्री मौनी जी महाराज श्रीरूपकला जी महाराज प्रभृति महापुरुषों के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इन महापुरुषों की कृपा से वैष्णव धर्म की पताका अनेकों प्रान्तों में आज तक फहरा रही है।

आज भी इन चारों महापुरुषों की कृपा पात्र विरक्त तथा गृहस्थ लाखों की संख्या में यत्र तत्र भजन पूजन द्वारा अपने जीबन को पवित्र कर रहे हैं,

आज भी श्री अवधधाम में सर्वत्र कथा कीर्तन सत्संग अबाध रूप से चल रहे हैं। यह धाम का प्रताप ही है। प्रतिमास कुछ न कुछ विशेष उत्सव होते ही रहते हैं। अगहन ( मार्गशीर्ष ) में श्रीसीताराम बिवाह महोत्सव,

पौष में द्विरागमन (गौना) उत्सव माघ में वसन्तोत्सव फाल्गुन में होली महोत्सव, चैत्र में श्रीराम नवमी महोत्सव वैशाख में श्री जानकी नवमी, ज्येष्ठ में श्री चन्द्रकला जयन्ती महोत्सव तथा फुलवंगला महोत्सव आषाढ़ में रथयात्रा एवं पूर्णिमा श्रावण में झूलनोत्सव, भाद्र में जल विहार आश्विन में रामलीला विजय दशमी एवं शरदपूर्णिमा महोत्सव कार्तिक में श्री हनुमत -जयन्ती एवं चौदहकोषी परिक्रमा इस प्रकार वर्ष भर उत्सव होते ही रहते हैं।

श्रीअवध की गलियों में चलते समय श्रीसीताराम नाम की ध्वनि कानों में आती रहती है। प्रातः से अर्ध रात्रि पर्यन्त आरती के घण्टा घड़ियाल के पवित्र शब्द सुनाई पड़ते हैं। आज भी अयोध्या पुरी में आध्यात्मिक वातावरण सदा विद्यमान रहता है।

भागवत का यह श्लोक आज भी यहां चरितार्थ है।

न यत्र वैकुण्ठकथासुधापगा
न साधवो भागवतास्तदाश्रयाः
न यत्र यज्ञेश मखा महोत्सवाः
सुरेश लोकोऽपि न वैस सेव्यताम्।

अर्थात् जहाँ भगवान कथा सुधा की नदियाँ नहीं बहती हों जहाँ सन्त महात्माओं का समागम न हो, जहाँ भगवान के विविध महोत्सव नहीं हों-चाहे वह स्वर्ग या ब्रह्मलोक क्यों न हो वहां निवास नहीं करना चाहिए। ये तीनों देवदुर्लभ वस्तुयें श्री अवध में प्राप्त हैं।

गीतावली में श्री गोस्वामी जी ने लिखा है —

राम लखन रिपुदमन भरत के चरित सरित अन्हवैया
तुलसी तब कैसे अजहुँ जानिबो रघुवर नगर बसैया।

जो प्रभु कथा सुधा में अवगाहन करते हैं वे आज भी अयोध्यावासी वैसे ही हैं जैसे श्रीराम जी के समय में थे।

श्री स्वामी युगलानन्य शरणजी महाराज लिखते हैं—

श्री सरयूतट बीच बास सजिये तजिये जग
याही में कुशलात मोद मंगल अनुपम मग,
श्रीसीतावर स्वच्छ सुयस गाइये एक रस
श्रीयुगलानन्य प्रयास बिना दम्पति कीजिए बस।

श्री महाराज जी कहते हैं श्रीअवधवास कीजिए और जगत् का त्याग कीजिए, इसी में मंगल है श्रीअवध में रहकर श्री सीताराम जी के पवित्र सुयश गाइये और बिना प्रयास दम्पति श्रीसीतारामजी को बश में कर लीजिए।

श्री स्वामी युगलानन्य शरण जी महाराज ने लिखा है कि अयोध्या-वासी चार प्रकार के होते हैं :—

१—जिनका जन्म यहाँ हुआ है।

२—जो बाहर से आकर यहाँ अखण्ड बास कर रहे हैं।

३—जो वर्ष में एक बार आते रहते हैं।

४—जो परिस्थिति वस अयोध्या नहीं आरहे हैं किन्तु मन सदा अवध के लिए छटपटाता रहता है।

ये चारों प्रकार के अयोध्याबासी शरीर छूटने पर श्री सीताराम जी को प्राप्त करेंगे।

अवध तजे तनु नहिं संसारा। गोस्वामी का यह डिमडिम घोष है कि श्रीअवध में शरीर छटने से संसार नहीं प्राप्त होता है अर्थात् श्रीअवध में निधन होने से श्रीसीताराम जी की प्राप्ति अवश्य होगी। श्री अवध में निवास करने से जीवन में अनायास श्री सीतारम नाम गुण लीला का श्रवण तथा मरणो-परान्त श्री सीताराम जी महाराज की प्राप्ति है यही श्री अवध का वर्तमान एवं अतीत का मङ्गलमय स्वरूप है। (धाम कान्ति द्वारा साभार उद्धृत)

# सीताजी के प्रति

( लेखिका—कुमारी कान्ति चौहान )

सीते !
जगत्—जननी !
पुनीते !
अर्चना में मैं तुम्हारी,
क्या सुमन अर्पित करूँ ?
जब गा चुके सम्मान में तब गीत कितने—
भक्ति—भावों से भरे··· ···
वे मातृ—मन्दिर के पुजारी,
कर रहे जो युग—युगान्तर से सदा ही
वन्दना निशि—दिन तुम्हारी। (कल्याण से साभार)

# 'अयोध्या परत्वम्'

लेखक—आचार्य पं० हरिदास शास्त्री
पट्टी सागरिया हनुमानगढ़ी अयोध्या

प्रभु श्री राम जी का धाम अयोध्या जी है । वैसे धाम का तात्पर्य तेज से है। 'धाम्नः स्वेन सदा निरस्त कुहकं सत्यंपरंधीमिहि, भगवान श्री षाड्ऐश्वर्य तेज के द्वारा अयोध्या वासियों के ताप त्रय का विमोचन, परिष्करण एवं परिहरण किया करते हैं। अति प्रिय मोहि यहाँ के वासी। मम धामदा पुरी सुख रासी (मानस)। सुखरासी का तात्पर्य भक्त सुख सुखित्व प्रभु श्री राम ही है।

गत्यर्थक अय धातु का अर्थ गति ज्ञान, गति मोक्ष, गति गमन, गति प्रयाण होता है ध्यं चिन्तायाम् का तात्पर्य सम्यक् परिचिन्तन इस प्रकार जीवन के सम्पूर्ण क्रिया कलाप जहाँ के वासियों के प्रभु श्री राम परक हैं, इस प्रकार की नगरी का नाम अयोध्या है। आहोस्वित, आ समन्तात् तपस्विनः भगवन्तं परमात्मानं श्री रामम् ध्यायन्ते यस्यां नगर्यां सा अयोध्या, इति, । अर्थात् जहाँ के संत महात्मा, सज्जन सदा भगवान श्री राम का ध्यान जिस नगरी में किया करते हैं उस नगरी का नाम अयोध्या है।

अथवा यस्याः दुर्गुणैः कोऽपि योद्धुम् जेतुं न शक्यः सा अयोध्या -दुर्गुणों के द्वारा जिसे आज तक कोई जय नहीं प्राप्त कर सका उस नगरी का नाम अयोध्या है।

अथवा श्री राम का अर्चावतार जहां पर प्रतिष्ठित है वह अयोध्या है।

अथवा ऐसा भी कहा जा सकता है कि साक्षात् परम पिता परमेश्वर जगन्नियन्ता जगदाधार का जो अयन है वह सबके लिए ध्येय एवं ज्ञेय है अतः इस नगरी का नाम अयोध्या है।

अतः श्री राम जी का धाम श्री अयोध्या जी यह लीला स्थली है। वह ईश्वर अपने विभूतियों के सहित अवतरित होकर लीला स्थलों में चरित्र की प्रतिष्ठापना करता है, जैसा कि ब्रह्म सू० २/१/३३/"लोकवत्तु लीला कैवल्यम्" ऐसा प्रतिपादित किया गया है। यथा राजा देलोके कन्दूकादि क्रीड़ा विशेषः केवल लीला रूपा एवोपलभ्यन्ते तथाऽवाप्त समस्त कामस्यापि ब्रह्मणो जगत सृष्टयादयो व्यापारा लीला कैवल्यमेव लीला मात्र मिति भावः— ॥ आनन्द भाष्य ॥ जैसे लोक में राजा आदि का बॅद खेलना आदि केवल क्रीड़ा के लिए है उसी प्रकार आप्त काम ब्रह्म का जगत की सृष्टि आदि व्यापार लीला मात्र के लिए है, वही उसका धाम या तेज बन जाता है।

धाम परत्व में श्री अयोध्या जी है, वैसे श्री अयोध्या दो हैं एक तो भूतल

पर और अपरा त्रिपादि विभूति में। तावत: दोनों एक ही है भूतल की अयोध्या लीला स्थान है और त्रिपाद् विभूति की अयोध्या भोग स्थान है। "भोग स्थानं पराऽयोध्या लीला-स्थानं त्वियं भूवि।

भोग लीला पतो रामो निरंकुश विभूतिक: (शिवसंहिता।२।१८)

तत्वात्मकदृष्टि से विचार करने पर दोनों एक ही सिद्ध होते हैं अत: दोनों का नाम भी एक ही है। श्री अयोध्या जी का ही नाम साकेत भी है। यथा- "अयोध्या नन्दिनी सत्या नामा साकेत इत्यादि कोशला राजधानी च ब्रह्मपूर पराजिता॥

अष्ट चक्रा नव द्वारा नगरी धर्म सम्पदा।
दृष्टेवं ज्ञानचक्षुषा ध्यातव्या सरयू तथा॥

इसी का विस्तृत वर्णन अथर्ववेद संहिता दशम (शि० संहिता २०।१५।१६) काण्ड प्रथम अनुवाक द्वितीय सूक्त २८।३३ मंत्र में किया गया है। पूर यो ब्रह्मणों वेद यस्या: पुरुष उच्यते।

यो वै तांब्रह्मणों वेदामृतेनावृतां पुरम॥
अष्ट चक्रा नव द्वारा देवानां पुर अयोध्या।

इन मंत्रो के व्याख्याकार श्री भगवताचार्य ने स्पष्ट लिखा है कि अयोध्या का इतना सुस्पष्ट वर्णन मुझे जहां तक स्मरण है वेदों में कहीं नहीं उपलब्ध है। साम्प्रदायिक रूप से भगवद्धाम का वर्णन इस प्रकार प्राय: नहीं है।

इसमे वेदितव्य है कि इस वेद मंत्र को ध्यान में रख कर ही गोस्वामि पाद ने मानस में बड़े ही समारोह के साथ संस्मरण किया है। राम धामदा पुरी सुहावनि।

लोक समस्त विदित अति पावनि।
चारि खानि जग जीव अपारा।
अवध तजे तनु नहि संसारा॥

इस स्थान पर भूतल की अयोध्या जी का माहात्म्य कहा गया है। क्यों कि यहां पर विभूति की श्री अयोध्या जी (साकेत लोक) की प्राप्ति कराती हैं। यहां तक कि चार खानों में विचरने वाले सभी जीव इस अयोध्या जी में शरीर छोड़ने से मुक्त हो जाते हैं।

यद्यपि काश्यां मरणान्मुक्ति:सूक्ति प्रसिद्ध है यद्यपि यह वाक्य श्रुति स्मृति आदि में कहीं उपलब्ध नहीं है। बहुत खोज करने पर भी अप्राप्य ही रहा। परन्तु यदि इसको मान भी लिया जाय तथापि काशी जी की मुक्ति में प्रधान कारण श्री राम नाम एवं राम मंत्र का उपदेश ही है। श्री अयोध्या जी के मुक्ति देने में जैसा कोई दूसरा कारण नहीं है, और जो मोक्ष प्रदायिका सप्त पुरियां हैं उनमें यह

अयोध्या श्रेष्ठ कही गई है। यह नगरी प्रभु श्रीराम की सब में शिर स्वरुपा है यथा है "अयोध्यापुरी मस्तके" ऐसी ख्याति है। भगवान श्रीराम जी ने इस पुरी पर अपना बहुत ममत्व प्रदर्शित किया है। यहां पर अवतार काल में भी ११०००, वर्ष रह कर इसे आपने बहुत अधिक गौरव प्रदान किया है। इस प्रकार का सौभाग्य अन्य और किसी भगवत् पुरी को नहीं प्राप्त हुआ। अतः इस पर प्रभु श्री राम की बड़ी महती अनुकम्पा है। वह श्री मुख से अनुग्रह करते हुए कहते हैं।

सुन कपीस अंगद लंकेशा।
पावन पुरी रूचिर यह देशा॥
यद्यपि सब बैकुण्ठ बखाना।
वेद पुरान विदित जग जाना॥
अवध पुरी सम प्रिय नहिं सोऊ।
यह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ॥
जन्म भूमि मम पुरी सुहावनि।
उत्तर दिशि सरजू बह पावनि॥
जा मज्जन ते विनहिं प्रयासा।
मम समीप नर पावहिं वासा॥
अति प्रिय मोहि यहां के वासी। इत्यादि

मा० उ० ३१

जिसके गौरव पवित्रता एवं सौभाग्य की समता बैकुण्ठ से भी किया जाय तो प्रभु को वह भी उतना प्रिय नहीं है। भगवती सरजू के पावन जल अवगाहन कर मानव प्रभु की सान्निध्यता प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है। ऐसा वर्णन एवं महत्व और किसी धाम को कहाँ प्राप्त हुआ।

काकर्षि जी कहते हैं—

अब जाना मैं अवध प्रभावा।
निगमागम पुरान अस गावा॥
कबनेहुँ जनम अवध बरु जोई।
राम परायन सो परि होइ॥
अवध प्रभाव जान तब प्रानी।
जब उर बसहि राम धनु पानी॥

श्री अवध की महतीं महिमा प्रभु कृपा साध्य है तभी अवध का महत्व समझ में आ सकता है। — श्री अयोध्या जी के निवासियों पर कृपा

एवं ममता की चरम सीमा यह है कि लीला की समाप्ति पर परम धाम यात्रा के समय आप अयोध्यावासी श्वास लेने वाले जीव मात्र को अपने साथ परम धाम को ले गये। इस वार्ता को आशुतोष भूत भावन भगवान शंकर से पार्वती जी ने बड़े ही समारोह के साथ एवं आश्चर्य से पूछा है।

"बहुरि कहहु करूनायतन, कीन्ह जो अचरज राम।
प्रजा सहित रघुवंश मनि, किमि गवने निज धाम॥

(मा० वा० ११०)

इसी प्रसंग को बड़े मार्मिकता के साथ महर्षि वाल्मीकि जी ने लिखा है—

अथ विष्णु महातेजाः पितामहमुवाचह।
ऐषां लोकं जनौघानां दातुमर्हसि सुव्रत॥
तच्छ्रुत्वा विष्णु वचनं ब्रह्मा लोक गुरूः प्रभुः।
लोकान्सन्तानकान्नाम यास्यन्तीमे समागताः॥
यच्च तिर्यग्गतं किंचित्वामेवमनुचिन्तयत्।
प्राणांस्त्यक्ष्यति भक्त्यातत्सन्तानेषु निवर्त्स्यति॥

(वाल्मी०)

अर्थात् ब्रह्माजी ने कहा ये सब सन्तानक लोक जायगें। तिर्यग्योनि के जो प्राणी समस्त पदार्थों में आपकी भावना करते हैं आपका चिन्तन करते हैं। वे प्राण त्यागकर सन्तानक लोक में जाते हैं उपर्युक्त वाल्मीकीय रामायण में भी रामजी के पर धाम का नाम सन्तानक एवं सन्तान कहा गया है। महा० भा०-आश्रम० २६।३१।३३ में भी परम धाम की यही संज्ञा कही गई है।

लोकाः सन्तानिका नाम भविष्यन्त्यस्यभारत।
यति धर्ममवाप्तोऽसौ नैव शोच्यः परंतपः॥"

यति विदुर के शरीर त्याग पर जब युधिष्ठर महाराज उनका दाह कर्म करने को उद्यत हुए तब आकाश वाणी हुई की यति धर्म प्रभाव से इन्हें सान्तानक लोक प्राप्त हो गया अतः इनकी क्रिया की अपेक्षा नहीं है। इस प्रकार की उदारता किसी भगवद्धाम की नहीं पाई जाती कि जिसके निवासियों पर ब्रह्म श्रीराम जी की इतनी महती अनुकम्पा हो।

इस प्रकार महान पुण्य शालिनी नगरी अयोध्या ऐसे उनके परम धाम के सम्बन्ध में प्रभु श्री राम जी का परात्परत्व जगमगा रहा है। इस शोभा सौन्दर्य का वर्णन हजारों शेष नाग भी करने में समर्थ नहीं है।

अवधपुरी वासिन्ह कर सुख सम्पदा समाज।
सहस शेष नहिं कहि सकहि जहँ नृप राम विराज॥
(मानस उ० २७)

परम मोक्ष दायिका भगवती अयोध्या के सौन्दर्य भाग्य की सराहना देवता ऋषि मुनि गन्धर्व शाश्वत किया करते हैं। प्रभु श्रीराम को अपने क्रोडा में बैठने का सौभाग्य इसी महापुरी को प्राप्त हुआ। अतः यहां की अतुल छबि छतान का अवलोकन कर बड़े २ मुनियों की विराग मयी भावनायें भी विस्मृति हो उठती है।

नारदादि सनकादि मुनीसा। दर्शन लागि कोशला धीशा।
दिन प्रति सकल अयोध्या आवहिं। देखिनगर विराग विसरावहिं
जात रूप मनि रचित अटारी। नाना रङ्ग रूचिर गच ठारी।
पुर चहुँ पास कोट अति अति सुन्दर। रचे कंगूरा रंग रंगवर।
नव ग्रह निकर अनीक बनाई। जनु घेरी अमरावति आई।
महि वहु रंग रचित गच काँचा। जो विलोक मुनिवर मन नाचा।
धवल धाम ऊपर नभ चुम्वत। कलस मनहुँ रवि ससि दुति निन्दत।

नगर शोभा भी अलौकिक है। आज भी श्री अवध के सभी मन्दिरों में प्रभु श्री राम की ही मूर्ति की प्रधानता है किसी न किसी माध्यम से श्रीराम ही ध्येय श्रेय है।

सुक सारिका पढ़ावहि वालक।
कहहु राम रघुपति जन पालक॥ (मानस)

इस प्रकार श्रीअवध के वृक्ष, पल्लव, शाखा, भूमि, जड़, चेतन श्री रामनाम से अभिव्याप्त हैं। यह अयोध्या पुरी ही न होकर बैकुण्ठाधिष्ठातृ भू देवी है। यही कारण है कि इनका स्तवन तीर्थ करते चले आरहे हैं।

जेहि दिन राम जन्म श्रुति गावहिं।
तीरथ सकल तहाँ चलि आवहिं॥ ( मानस )

अतः श्री अयोध्या जी विष्णु भगवान चक्र पर स्थिर है काशी नगरी की विशिष्टता वहाँ प्रवाहित होने वाली गंगा के माध्यम से है और वह श्री अवध के राजकुमार भागीरथ के द्वारा लाई गई। अतः अयोध्या से ही श्री काशी जी का गौरव है।

अकारस्य ब्रह्म च प्रोक्तं ,
यकारस्य विष्णु उच्यते ।
धकारस्य शिव रूपं च ,
अयोध्या नाम राजते ॥

अयोध्या जी का अकार यही स्वयं ब्रह्म श्री राम हैं । यकार भगवान् विष्णु हैं। तथा धकार ही शिव हैं । इस प्रकार श्री अवध की शोभा अतुल है। जहाँ निवास करने वाला पुरुष भगवान श्रीराम के परायण हो जाता है ।

कोटि कल्प काशी बसै मथुरा कल्प हजार ।
एक निमिष सरयू बसै तुलै न तुलसी दास ॥

जिस नाम के बल से आज भी आशुतोष भगवान् शंकर मुक्ति प्रदान कर रहे हैं वह प्रभु श्रीराम की जन्मभूमि यही अयोध्या ही है अतः प्रभु श्री राम जब भी अवध का स्मरण करते हैं तो नेत्रों में आंसू छलक पड़ते हैं ।

जब जब राम अवध सुधि करहीं ।
तब तब वारि विलोचन भरहीं ॥

अतः श्री अयोध्या जी कितनी सौभाग्यशालिनी हैं इनके दर्शन मात्र से जीव का कष्ट दुःख दूर हो जाता है यहां का निवासी संसार के आवागमन से विमुक्त प्रायः हो जाता है और श्रीराम के चरणों में उसकी अविरल प्रीत हो जाती है श्री अवध की महिमा अगाध है । गोस्वामी पादने कहा कि–

देखतपुरी अखिल अघ भागा ।
वन उपवन वापिका तड़ागा ॥
(मानस०)

यद्यपि प्रभु का नाम रूप लीला धाम सभी प्रिय है और सभी भक्ति के अङ्ग हैं पर मानस में आवरण वन्दनाके बाद सर्व प्रथम धाम की ही बन्दना की गई है । क्यों कि नाम रूप का प्राकट्य सर्व प्रथम धाम में ही होता है । अतः धाम निवासियों को प्रभु कहें अतिप्रिय मोहि यहां के बासी । अतः भूतभावन भगवान शंकर नाम का चिन्तन करते हुए रूप के दर्शन की उत्कट अभिलाषा लिए हुए भगवती पार्वती से बड़े ही समारोह के साथ कहे–

अउरउ एक कहउँ निज चोरी ।
सुन गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी ॥
काग भुसुंडि संग हम दोऊ ।

मनुज रूप जानइ नहिं कोऊ ॥
परमानन्द प्रेम सुख फूले ।
वीथिन्ह फिरहि मगन मन भूले ॥
(रा० मा०)

श्री अवध धाम की पावन विथियों में अतन रहते हुए परमानन्द की अनुभूति मात्र काकषि के सहित इन्हीं को हो रही है। अतः अवध की महिमा अपार है जितना कहा जाय थोड़ा ही है अतः एक विहङ्गम दृष्टिपात करने से ज्ञात हो जाता है कि श्री अवध धाम धामादि पति है और यहां की अधिष्ठातृ भगवती लक्ष्मी अधिष्ठाता देव भगवान विष्णु हैं अतः धाम की कृपा से नाम रूप लीला का भी परिज्ञान होता। जो सभी के लिए ध्येय है।

मेध्या महर्षि चरितैरहितै अयोध्या,
योध्येति विश्व विदिता मनुराजधानी ॥
यथोच्छलन्ति कलिकाल मलाभिषङ्गाः,
निर्वाण रङ्ग चतुराः सरयू तरंगाः ॥

परम विद्वान महर्षियों से परिपूर्ण मनु की राजधानी विश्वविदित है जो कलिकाल के अघादिक मल को प्रक्षालित कर भगवती सरयू की लोल लहरें निर्वाण मोक्ष प्रदान करती हैं।– यह श्रीअयोध्या की महती महिमा ही तो है।

सूचना :–

मन्दिर श्रीराम जन्म भूमि के सम्बन्ध में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिये महान्त श्री सियाराघव शरण जी से सम्पर्क करे।

स्थाई पता:–

**महान्त सिया राघव शरण**

श्रीराम जन्म भूमि, रामकोट, अयोध्या, फैजाबाद (उ० प्र०)

# ❋ अवधधाम ❋

ले० मानस मार्तण्ड श्री प्रेमदास जी रामायणी

बंदउँ अवधपुरी अति पावनि ।
सरजू सरि कलि कलुष नसावनि ॥

श्री अवध सरयू का नित्य सम्बन्ध है, इसीलिये एक ही मङ्गलमें साथ ही दोनों को समाहित किया गया है और अभिन्नता को सिद्ध किया, ये दोनों ही अति पावन कलि कलुष नसावनि हैं ।

अतिशावनि-मोक्ष देने वाली सप्तपुरियों (अयोध्या, मथुरा, माया, अर्थात् हरिद्वार, काशी, कांची-अवन्तिका अर्थात् उज्जैन और द्वारिका) में अयोध्या जी श्रेष्ठ हैं-क्योंकि सप्तपुरियों को विष्णु अंग में रहते हुए इसे मस्तक कहा है यथा-विष्णोः पादमवन्तिका गुणवती मध्ये च काञ्चीपुरी नाभि द्वारावती तथा च हृदये मायापुरी पुण्यदाम् । ग्रीवा मूल मुदाहरन्ति मथुरा नासां च वाराणसी मेतद् ब्रह्म पदं वदन्ति मुनयोऽयोध्यापुरीं मस्तकम् ॥ यहां सब तीर्थों के राजा प्रयाग भी राम नवमी पर आकर पवित्र होते हैं यथा तीरथ सकल तहां चलि आवहि, श्री अयोध्या जी श्रीसीताराम जी का विहार स्थल एवं प्रिय पुरी हैं यथा-पावनि पुरी रुचिर यह देसा जद्यपि सब बैकुण्ठ बखाना-बेद पुरान विदित जग जाना-अवध सरिस प्रिय मोहि न सोऊ । सरजू की महिमा भी पुराणों में भी है-यथा-मन्वन्तर सहस्त्रेण काशी वासेन यत्फलम् । तत्फलं समवाप्नोति सरयू दर्शनान्नरः (स्कंदपुराण) इसीलिये दोनों अतिपावनि हैं ।

कलिकलुष नसावनि-का अभिप्राय यह है कि कलियुग में अन्य युगों की अपेक्षा अधिक पाप है -यथा-ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेता नाहिं । द्वापर कछुक वृन्द बहु होइहहि कलिजुगमाहिं । कलि केवल मल मूल मलीना । पाप पयोनिधि जनमन मीना । जब ऐसे युग के भी पापों का नाश करती है । तब अन्य युगों की तो कोई बात ही नहीं-

रामधामदा पुरी सुहावनि ।
लोक समस्त विदित अति पावनि ॥

यह सुहावनी पुरी साकेत धाम को देने वाली है, समस्त लोकों में प्रसिद्ध है ।

इसमें पूर्व पाप का नाश होना कहा—तब रामधाम की प्राप्ति कही क्योंकि पाप नाश से ही परधाम की प्राप्ति होती है।

शंका—रामधाम तो अयोध्या ही हैं फिर वह कौन है जिसे यह अयोध्या देती है—

समाधान—श्री अयोध्या दो हैं—एक भूतल पर दूसरी ब्रह्मांड से परे, दोनों तत्वत: एक हैं। भेद केवल माधुर्य और ऐश्वर्य लीलाओं का है। यथा—भो स्थानं परायोध्या लीलाओं स्थानं त्विय भुवि। (शिवसंहिता) भोग स्थान परायोध्या साकेत नाम से विख्यात है एवं लीला स्थान अयोध्या यही है। जो वर्तमानकाल में कही जाती है। तत्वत: एकता से दोनों का एक नाम है। इसी का वेद में विस्तृत वर्णन है। लीला स्वरूपा अयोध्या प्रकृति मण्डल में रहती है परन्तु उसको प्रकृति का विकार नहीं लगता-प्रत्युत अन्यान्य प्रकृति विकार को हर कर अपने नित्य रूप को देती है इसी से इस पुरी को यहाँ रामधामदा कहा है।

चारि खानि जग जीव अपारा।
अवध तजे तनु नहि संसारा॥

जगत के अनगिनत जीवों की चार खाने (उत्पति स्थान) हैं। श्री अयोध्या जी में शरीर छूटने से फिर संसार नहीं रहता अर्थात् वे जन्म मरण के चक्कर से सदा के लिये मुक्ति पाते है, पाप से शुद्ध होकर श्रीराम जी के धाम को प्राप्त होते हैं—यहाँ एक शंका हो सकती है श्रुतियों का सिद्धांत है कि—ऋते ज्ञानान्न मुक्ति:' अर्थात् ज्ञानोपासना के बिना मुक्ति नहीं होती और धाम में शरीर त्यागने मात्र से मुक्ति कही गई है। यह विरोध है—इसका समाधान यह है कि धाम से मुक्ति होने की भी श्रुतियाँ हैं—यथा—काश्यां मरणान्मुक्ति:—यह प्रसिद्ध है अब इस कथन से यह सिद्ध हुआ कि—ऋते ज्ञानान्न मुक्ति सामान्य रीति से यह संसार के सब जीवों के प्रति है अत: सर्वदेशीय एवं सामान्य है और—काश्यां मरणान्मुक्ति: यह एक काशी के लिए है। अत: विशेष है—जैसे कोई विज्ञापन निकाले कि मैं अमुक गाँव के लोगों से व्यवहार नहीं करूंगा—यह वहाँ के सर्व-साधारण के लिए हैं वह उसी गांव के किसी एक व्यक्ति के नाम पत्र लिखे कि आप कृपा करके आवें मेरा अमुक प्रयोजन है। यह विशेष वाक्य है। तब आशय यह हुआ कि इसे छोड़कर शेष के लिये उक्त सामान्य वचन है। अत: धाम। मुक्ति प्राप्त होना निर्विरोध है।

भगवान श्रीराम जी जब १४ वर्ष बाद वन से लौटे तो आकाश मार्ग से पुष्पक विमान से अयोध्या का वर्णन करते हैं—यथा—

वेद पुराणों में प्रसिद्ध है सुर मुनि भी बैकुण्ठ को श्रेष्ठ कहकर उसे सराहते हैं और सारा जगत जानता है क्यों कि लोकों के पालन करने की शक्ति भगवान श्री रामजी के विष्णु रूप में हैं—बैकुण्ठ उनका निवास है इससे उसे सब कोई जानते हैं। राज दरबार सबके लिये प्रसिद्ध होता ही है, परन्तु राजा को वह स्थान विशेष प्रिय नहीं होता, क्योंकि वह उसके परिश्रम का स्थान है। आवश्यकतानुसार राज दरबार में आता है। कार्य मन्त्री आदि सदा करते रहते हैं परन्तु जो मंदिर राजा का विशेष निवास स्थान है वह उसके विश्राम एवं अमोद प्रमोद का स्थान है। वह उसे विशेष प्रिय होता है। उसे राजा के समीपी ही जानते हैं। इसी तरह अयोध्या ( साकेत ) आपका नित्य विहार स्थान है। इसे भी रामजी के समीपी ( उपासक ) ही जानते हैं यथा अवध प्रभाव जान तब प्रानी, जब उर बसहि राम धनु पानी। यह परम गोप्य रहस्य है जिस पर रामजी की बड़ी कृपा होती है, वही इसके गुह्य रहस्य को समझ पाता है कि इस पुरी से श्रेष्ठ और पुरी नहीं है—यथा पुरं यो ब्रह्मणो वेद यस्याः पुरुष उच्यते। से पुरं हिरण्ययी ब्रह्माविवेशा परा जिताम— ( अथर्व वेद ।१०।२।२८।३३ ) इन साढ़े पाँच मंत्रों में श्री अयोध्या पुरी का अत्यन्त स्पष्ट वर्णन है इसकी तुलना कोई नही कर सकती है।

भगवान श्रीराम जी ने माधुर्य दृष्टि से इसे अपनी जन्मभूमि कहा है यही प्रियत्व का हेतु है जन्मभूमि सबको प्रिय होती ही है यह मेरी पुरी है और मेरे नाम से प्रसिद्ध है—यथा—जद्यपि अवध सदैव सुहावनि—रामपुरी मंगल मय पावनि। जेहि विधि राम नगर निज आये, दूसरा—लोकोत्तर सुहावनी भी है—यथा—पुर सोभा संपति कल्याना. निगम सेष सारदा बखाना। तेउ यह चरित देखि ठगि रहहीं, उमा तासु गुन नर किमि कहहीं। इससे मुझे अति प्रिय हैं। तीसरा—यह कि इसके ही एक देश में पावनी श्री सरजू वहती है जो मज्जन करने वालों को मेरा सामीप्य प्राप्त कराती है। चौथा यह कि यहाँ वासी मुझे अति प्रिय हैं। और पाँचवाँ यह कि यह मम धामदा पुरी सुखरासी है।

जैसे वैकुंठ की अपेक्षा श्री अयोध्या जी अति प्रिय हैं वैसे बैकुंठ वासी अपेक्षा श्री अयोध्यावासी भी अति प्रिय हैं—प्रभु ने अवध वासियों से यह अपना प्रीत्यात्मक सम्बन्ध कहा है इसी सम्बन्ध से वे पुरवासी विश्व वंदनीय हुये। यथा—प्रनवउँ पुर नरनारि वहोरी। ममता जिन्ह पर प्रभुहि न थोरी॥

# श्री नागेश्वर नाथ माहात्म्य

प्रस्तुतकर्त्ता:—श्री पाणिनि पाण्डेय वेद व्याकरणाचार्य

श्री पार्वती जी ने श्री शंकर जी से पूछा ! हे देवों के स्वामी ! किस समय से आप स्वर्गद्वार में नागेश्वर नाथ नाम से विराजते हैं इसको आप शीघ्र कहिये तथा आपकी स्थापना किसने किया ।

श्रीशङ्कर जी ने श्री पार्वती जी से कहा हे प्रिये ! जब से मेरी स्थिति स्वर्गद्वार में हुई वहीं मैं तुम्हे बतला रहा हूं ध्यानावस्थित सुनो ! जिस समय परमात्मा श्री रामचन्द्र जी अयोध्या को छोड़कर बैकुण्ठ लोक के साकेत खण्ड में सिधारे। साकेत यात्रा के पहले कुशाग्रबुद्धि श्रीरामचन्द्र जी अपने पुत्र कुश जी को कुशावती नगरी का राज्य देकर साकेत में अयोध्या वासी समस्त जीवों को ले गये। उस समय अयोध्या सूनी हो गई, केवल तीर्थ तथा देवता अयोध्या में रह गये। उसी समय श्री अयोध्या पुरी देवी रुप धारण कर अर्ध रात्रि बेला में, कुशावती नगरी में अपने राजमहल में, महाराज कुश जी अकेले जहाँ सो रहे थे वहाँ पहुँची।

महाराज कुश ने देवी रुप में श्री अयोध्या पुरी को देखकर पूछा—हे सुन्दरी ! तुम कहाँ से आई हो तुम देवी हो या मानुषी हो या किन्नरी हो ...

श्री अयोध्यापुरी स्त्री स्वरुपा ने उत्तर दिया। साकेत लोक को जाते समय, आपके पिता श्री रामचन्द्रजी के द्वारा मेरे अयोध्या पुरी के निवासी सम्पूर्ण जीवादि अपने साथ तो ले गये तथा करोड़ों अगणित संख्याक प्राणी स्वर्ग में पहुँच गये। सूर्य बंश के भूषण हे कुश महाराज ! आपमें सब प्रकार की शक्तियाँ रहने पर भी अयोध्या पुरी की ऐसी दुर्दशा है जो नारकी जीवों की भी नहीं हो सकती ।

भग्ना मे रचना सर्वा शास्त्रापि प्रभुणा बिना ।
अस्त सूर्या यथा सन्ध्या वायुना मेघ मण्डलै: ॥ ६ ॥

आप ऐसे शासक स्वामी के बिना मेरी अयोध्या पुरी की समस्त रचनायें, शोभा छिन्न-भिन्न हो गयी है, जिस प्रकार वायु के द्वारा प्रेरित मेघ मण्डलों से आच्छादित सूर्य के छिप जाने पर सन्ध्या की प्रतीति होने लगती है, अन्धकार हो जाता है वह मेरी दशा हो रही है ... ... ...

श्री कुश महाराज ने कहा—हे देवि अयोध्ये ! जो तुम ऐसा कह

रही हो, इसमें मेरे पिता जी का कुछ भी दोष नहीं हैं। तुम्हारे श्रीअयोध्या पुरी में बास करने के पुण्य प्रभाव से समस्त प्राणी सन्तानक साकेत लोक को चले गये हैं।

श्री अयोध्यापुरी ने कहा—हे राजन ! यदि मेरे पुरी में निवास करने के पुण्य प्रभाव से सब जीव साकेत चले गये, इसमें सन्देह नहीं तो यदि आपको भी स्वर्ग अति प्रिय है। तो मेरे ही अयोध्या पुरी में तुम निवास करो, ऐसा कह कर तत्काल वे अन्तर्ध्यान हो गयी ... ... ...

महा बुद्धिमान कुश जी ने पूर्ववत पुरी को बसाया। एक दिन सखी-जनों के साथ नौका में बैठकर श्री सरयू जी में जल बिहार करने लगे। श्री सरयू जी में एक कुमुद नामक नाग रहता था। उस नाग की बहिन बड़ी सुन्दरी थी, जिसका नाम कुमुद्वती देबी था। उसने महाराज के सौन्दर्य पर मोहित होकर उनके हाथ के कङ्कण को चुरा लिया। जल क्रीडा निमग्न महाराज कुश कंकण की चोरी हो गई, इस बात को न जान पाये। जिसको श्रीअगस्त्य जी ने, परमात्मा श्री रामचन्द्र जी को दिया था।

श्री रामचन्द्रजी उसी कंकण को अपने पुत्र कुश जी को देकर साकेत चले गये। एक तो पिता का दिया हुआ, दूसरे अगस्त्यजी का प्रसाद, तीसरे बिजय कंकण इसलिये बड़ा शोक किया। ... ... ... ...

उस कंकण के मिलने के लिये महाराज ने अग्नि मन्त्र से अभिमन्त्रित तीखे बाण को हाथ में उठाया। इस घटना को देखकर श्री सरयू देबी महाराज के चरण कमलों के पास पहुँच गई और रक्षा करो २ ऐसी कहती हुई मेरा इसमें कुछ भी दोष नहीं है, कुमुद नामक नाग की बहिन कुमुद्वती ने उस कंकण को चुराया है।

श्री शंकर जी ने कथा के सन्दर्भ में कहा, हे पार्वती जी ! नाग की बहिन कुमुद्वती ने कंकण चुराया है ऐसा सुनकर सर्प जाति संहारक गरुड़ बाण को धनुष पर छोड़ने के लिये चढ़ाया। हे पार्वती ! सर्पराज कुमुद, छोड़े जाते हुए गरुड़ बाण को देखकर अपनी बहिन कुमुद्वती के साथ महाराज के सामने आ गया। चरणों में पड़ गया और कंकण को अर्पण कर दिया तथा प्रार्थना किया कि महाराज ! मेरी बहन कुमुद्वती ने जो दुष्टता किया उसे आप क्षमा करें।

श्री शङ्कर उवाच—

कुमुदो मम भक्तोहि नागराजः प्रियो मम ।

तस्य कष्टं समालोक्य प्रत्यक्षम् भवम् प्रिये ।।२५ ।।

श्री शङ्कर जी ने कहा हे प्रिये ! कुमुद मेरा भक्त है नागराज होने से मेरा अति प्रिय भी है । अतः उसके कष्ट को देखकर कुश जी के सामने मैं प्रत्यक्ष रुप से प्रकट हो गया ।

मुझे देखकर महाराज कुश ने मेरे चरणों में प्रणाम किया तथा हाथ जोड़कर मेरे आने का कारण पूछा हे पार्वती ! मैंने कहा हे राजा मैं अपने भक्त के रक्षा के लिये आया हूँ । इस भक्त नाग की वहन कुमुद्वती है, उसे अपनी पत्नी बनाने के लिये आप ग्रहण करें । हे महाराज ! जो बरदान आपको चाहिये वह मुझसे माँग लीजिये परन्तु हे महाबल शाली आप इस मेरे भक्त नाग को छोड़ दीजिये । श्री कुश जी ने कहा – हे भक्त रक्षक भोलानाथ ! यही वर दीजिये कि आप भक्तों के रक्षा निमित्त स्वर्ग-द्वार में सदा निवास कीजिये तथा आपकी प्रसिद्ध नागेश्वरनाथ नाम से होवें । ऐसा वर माँग कर षोडशोपचार सामग्री से ॐ नमः श्री शिवाय इस मन्त्र से कुशजी ने मेरा पूजन तथा जप किया ।

कमल नेत्र महाराज कुश ने अपनी प्रजाओं में धार्मिक शासन को सुनाया । स्वर्गद्वार में मनुष्य स्नान कर श्री नागेश्वर नाथ जी का दर्शन पूजन अवश्य करें । यदि स्वर्गद्वार में स्नान कर श्रद्धालु मनुष्य श्री नागेश्वरनाथ जी का विधान पूर्वक पूजन करता है, उसकी सब कामनायें परिपूर्ण होती है, इसलिये स्वर्गद्वार स्थानीय नागेश्वर नाथ जी का दर्शन अवश्य करें । श्री नागेश्वर जी का दर्शन करके ही तीर्थयात्रा परिपूर्ण होती है, जो श्री नागेश्वर जी का दर्शन नहीं करेगा उसको तीर्थयात्रा का आधा पुण्य मिलेगा श्री शङ्कर जी पार्वती से कहते हैं कि इस धार्मिक शासन को सुनाकर कुश जी अपने राजमहल में चले गये । नागराज कुमुद भी १ ( एक मास ) पर्यन्त श्री नागेश्वर जी का नियमतः पूजन करके अपने घर को चले गये । हे पार्वती ! उसी समय से मैं स्वर्गद्वार में निवास करता हुँ , जो तुमने पूछा था कि स्वर्गद्वार में कब से निवास करते हो इसकी कथा सुनाया । ( रुद्रयामलीय शिव पार्वती के सम्वाद हिन्दी टीका रूप श्री अयोध्यामाहात्म्य के आधार पर )

# श्री अवध धाम की महिमा

ले०—महान्त श्रीहरिनाम दास जी वेदान्ती, श्री जानकी घाट अयोध्या

"अवध प्रभाव जान तब प्राणी, जब उर बसहिं राम धनुपाणी"

भगवान की लीला भूमि भारत में प्रसिद्ध अनेक तीर्थों में प्रधान भूत-मोक्षप्रद सप्त पुरियों का वर्णन पुराणों में मिलता है— "यथा—अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका, पुरी द्वारा वती क्षेया सप्तैता मोक्षदायिका" अयोध्या मथुरा, हरिद्वार (कनखल) विष्णु कांची, उज्जैन, काशी, द्वारापुरी। इन सात पुरियों को भगवान के अंग में बताया है यथा—"विष्णोः पाद अवन्तिका गुणवती मध्येच कांची पुरी, नाभौ द्वारावती तथा च हृदये मायापुरी पुण्यदा ग्रीवा मूल मुदाहरन्ति मथुरा नाशाग्र वाराणसी, एतद्ब्रह्मवदन्ति वेद मुनयोऽयोध्यापुरी मस्तके। भगवान के चरणों में उज्जैनीपुरी, कटि भाग में कांचीपुरी नाभी में द्वारिकापुरी, हृदय में हरिद्वार कंठ देश में मथुरापुरी नासिका के अग्र-भाग में काशी पुरी और अयोध्यापुरी मस्तक में स्थित हैं।

सामवेद में श्री अयोध्या जी को देवताओं का पुर बताया है यथा—

"अष्ट चक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या तस्या हिरण्मयः कोशः
स्वर्गो लोको ज्योतिषावृतो यो वै तां ब्रह्मणो वेदामृतेनावृतां
पुरीम् तस्मै ब्रह्मा च आयुः कीर्ति प्रजांददुः

(सामवेदीय तैत्तरीयश्रुतिः)

नयोध्या सर्वतो यस्मात् तामयोध्यां ततो विदुः अकारो वासुदेवः
स्यात् यकारस्तु प्रजापतिः उकारो रुद्र रूपस्तु तां ध्यायन्ति मुनीश्वराः

अयोध्या शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए बताया कि जिसको कोई जीत न सके उसका नाम अयोध्या है इसका दूसरा नाम अपराजिता है। अकार वासुदेव का वाचक है यकार ब्रह्मा का और उकार शंकर का वाचक है इन तीन शब्दों से निस्पन्न को मुनीश्वर ध्यान करते हैं।

तथा—विष्णोराधा पुरी चेयं क्षिति न स्पृशतिप्रिये।
विष्णोः सुदर्शने चक्रे स्थिता पुण्यांङ्कुरा सदा।
पत्र प्रयाग राजोऽपि स्नातु मायाति कार्तिके।

स्कन्द पुराण में शंकर जी ने पार्वती जी से कहा कि हे प्रिये! यह विष्णु भगवान की आदि पुरी अयोध्या पृथ्वी से ऊपर सुदर्शन चक्र के ऊपर

स्थित है, कार्तिक मास में श्री तीर्थराज प्रयाग भी अयोध्यास्थ सरयू जी में स्नान करने आते हैं।

त्रिपाद्विभूति वैकुन्ठे विरजाया: परेतटे, या देवानां
पू रयोध्या त्यमृतेनावृतापुरी" (भार्गव पुराणे)

"याऽयोध्या पुरी सा सर्व बैकुण्ठानां मूलाधारा मूलप्रकृतेः परा सा ब्रह्म मयी विरजोत्तरा दिव्यरत्न कोशाढ्या तस्यांनित्यमेव सीतारामयो वितारस्थलत्र स्तीति" ( श्रुतिः ) इत्यादि। नारद पञ्चरात्र में श्रीनारद जी ने बताया है कि भगवान श्रीराम जी का नाम, रुप, लीला, धाम चारों परात्पर और सच्चिदानन्द स्वरुप तथा नित्य है यथा "रामस्य नामरूपं लीलाधाम परात्परं, एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्द विग्रहम्" भगवान जब लीला विभूति में प्रगट होते हैं तव नाम लीला और धाम का भी प्राक-ट्य होता है। पूज्य पाद गोस्वामी श्री तुलसी दास जी कृत श्रीराम चरित मानस में भगवान श्रीराम जो स्वयं श्री अवध की महिमा का वर्णन करते हैं।

यथा–"जन्म भूमि मम पुरी सुहावनि, उत्तर दिसि सरयू वह पावनि,
जा मज्जन ते विनहि प्रयासा, मम समीप नर पावहि वासा,
जद्यपि सब बैकुन्ठ बखाना, वेद पुराण विदित जगजाना,
अवध पुरी सम प्रिय नहि सोऊ, यह प्रसङ्ग जानइ कोउ-कोऊ।
चारि खानि जग जीव अपारा, अवध तजे तनु नहिं संसारा।

कोई भी प्राणी श्री अवध में वास करेगा या शरीर त्यागन करेगा वह भगवद्धाम को प्राप्त करेगा जिस के लिए गीता में भगवान श्रीश्यामसुन्दर ने संकेत किया है

यद्गत्व न निवर्वन्तो तद्धाम परमं मम।

परन्तु श्री अवध धाम का प्रभाव तभी ज्ञात होता है जब धर्नुधारी भगवान हृदय में वास करते हैं।

# सच्चिदानन्द चतुष्टय

(ले० मानस तत्वान्वेषी पं० श्री रामकुमार दास जी रामायणी मणिपर्वत अयोध्या)

वन्दे श्री रामचन्द्रस्य नाम रुपं परात्परम् ।
लीला धामं तथात्वंहि सच्चिदानन्दमव्ययम ॥

सूर्य वंश के कुल गुरू ब्रह्मात्मज महामुनिराज ब्रह्मर्षि श्री वशिष्ठ जी ने अपनी संहिता में लिखा है कि —

रामस्य नाम रुपं च लीला धाम परात्परम् ।
एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्द विग्रहम ॥
सीतापति को बाम अरु रुप सुलीला धाम ।
चारों सब गुण युक्त है पहुचावत हरि भाम ॥
राम चरित मानस कथित वरनऊँ श्रुति पथ चार ।
नाम रुप लीला पुरी भक्तन को आधार ॥

अन्य सद्ग्रन्थों में भी इसी सत्तत्व को अनेक प्रकार से कहा गया है कि 'श्री राम' ऐसा नाम 'द्विभुज धनुधरादि' रुप, श्री अयोध्या धाम और पुराण इतिहास एवं रामायणादि में वर्णित 'श्री राम चरित्र' ये चारों सच्चिदानन्दात्मक है, नित्य दिव्य है। सच्चिनन्दाख्या इत्युपासितव्यम् (रा.ता.) आदि मन्त्रों द्वारा वैदिक श्रुतियाँ भी इसी तत्व का उद्घोष करती हैं। प्रातः स्मरणीय गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज ने अनेकों स्थान में प्रतिज्ञाकिया है कि – श्रीराम चरित मानस में श्रुतिस्मृति प्रतिपादित सिद्धान्त का ही वर्णन है।

'नाना पुराण निगमागम सम्मतम् ० ।'
'मुनिन प्रथम हरि कीरति गाई । तेहि मग चलत सुगम मोहि भाई ॥'
'वरनउँ रघुपति विशद यश श्रुति सिद्धान्त निचोरि'

इत्यादि। तब श्री रामचरित मानस में निश्चयतः उपरोक्त चतुष्टय सामान रूप से और सच्चिदात्मक ही वर्णन हुआ है। इसका किंचित अन्वेषण मानस–प्रेमियों के विनोदार्थ यहाँ दिया जा रहा है।

१– चारों मंगल करने वाले है :–

नाम– मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी ॥
भाव कुभाव अनख आलसहूं। नाम जपत मंगल दिशि दसहूं ॥

रुप– 'मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवहुँ सो दशरथ अजिर विहारी'
लीला–'भनिति भदेश बस्तु भलि बरनी। राम कथा जग मंगल करनी'
मंगल करनि कलिमल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की'
धाम– 'सब बिधि पुरी मनोहर जानी। सकल सिद्धि प्रद मंगल खानी'॥

२— चारों मनोहर हैं।
नाम– 'आखर मधुर मनोहर दोऊ। वरण विलोचन जन जिय जोऊ॥
रुप– 'राज कुँवर तेहि अवसर आये। मनहुँ मनोहरता तनु छाये'॥
'मूरति मधुर मनोहर देखी। भये विदेह विदेह विशेषी'॥
लीला–'परम मनोहर चरित अपारा। करत फिरत चारिउ सुकुमारा'॥
धाम– 'सब बिधि पुरी मनोहर जानी।'

३— चारों पावन है।
नाम– 'यहि मँह रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुराण श्रुति सारा'॥
सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने वश करि राखे रामू॥
'तीरथ अमित कोटि सम पावन।'
रुप– परसत पद पावन शोक नशावन, मैं नारि अपावन प्रभु जग पावन,
लीला–'जग पावन कीरति विस्तरि है। पूछेहु रघुपति कथा प्रसंगा॥
सकल लोक जग पावनि गंगा। मैं यह पावन चरित सुहावा॥
'यश पावन (रावण नाग महा) पावन गंग तरंग भाल से।'
धाम– 'सुनु कपीश अंगद लंकेशा। पावन पुरी रूचिर यह देशा॥
लोक समस्त विदित जग पावन। वन्दौ अवध पुरी अति पावनि।
पुनि लखु अवध पुरी अति पावनि'॥

४– चारों अनुपम है—
नाम–'अगुन अनूपम गुण निधान सो'॥
रुप– 'चितवहि सादर रुप अनूपा। तृप्ति न मानहि मनु सतरुपा॥'
लीला–'कहहुँ नाथ हरि चरित अनूपा।
धाम– सन्त सभा अनुपम अवध ०॥

५— चारों से जरनि जाती है ।
नाम–'राम नाम जपे जीहा जैहे जिय की जरनि '।
रुप– जिय की जरनि हरत हँसि हेरत ॥
लीला– मन करि विषय अनल बन जरई । होइ सुखी जो एहि सर परई ॥
धाम– पूँछत सखहि सों ठाँऊ दिखाऊ । नेकु नयन मन जरनि जुड़ाऊ ॥
६— चारों नाव हैं—
नाम– घोर भवनीर निधि नाम निज नावरे ।
रुप– यत्पादप्लव मेकमेव हि० ।
लीला– करौ कथा भव सरिता तरनी ॥
धाम– वन्दौ अवध पुरी अति पावन ।
७— चारों उदार है ।
नाम– एहि महँ रघुपति नाम उदारा ।
रुप– सुनहु उदार परम रघुनायक ।" ताहि देइ गति राम उदारा ।
लीला–बाल चरित पुनि कहहुँ उदारा । परम उदार चरित रघनायक ।
नाथ जबहि कौशल पुरी होइहि तिलक तुम्हार ।
कृपासिन्धु मैं आउब देखन चरित उदार ॥
धाम– मन्दिर मणि समूह जनु तारा । नृप ग्रह कलश सो इन्दु उदारा ॥
८— चारों साधकों को सिद्धि देने बाले हैं ।
नाम– साधक नाम जपहि लय लाये । होहि सिद्ध अणिमादिक पाये ॥
रुप– भव भेषज रघुनाथ यश , सुनहि जे नर अरु नारि ।
तिनकर सकल मनोरथ , सिद्ध करहिं त्रिपुरारि ॥
लीला–मन कामना सिद्ध नर पावा । जो यह कथा कपट तजि गावा ॥
धाम– सब विधि पुरी मनोहर जानी । सकल सिद्धि प्रद मंगल खानी ॥
९— चारों भक्तों के अघ नाशक है ।
नाम– जासु नाम पावक अघ तूला ।
रुप– सन्मुख होई जीव मोहि जबही । जन्म कोटि अघ नासहिं तबही ॥
तुम्हरे भजन प्रभाव अघारी । जानौ महिमा कछुक तुम्हारी ॥
लीला– मन क्रम वचन जनित अघ जाई । सुनै जो कथा श्रवन मन लाई ॥
राज कि रहै नीति बिनु जाने । अघ कि रहइ हरि चरित बखाने ।
धाम– देखत पुरी अखिल अघ भागा ।
१०— चारों श्री राम जी के दिव्य धाम ( त्रिपाद्विभूतिस्थ साकेत )
देने वाले हैं

मन क्रम बचन जनित अघ जाई, सुनहि जे कथा श्रवन मन लाई।

नाम– 'राम राम कहि तनु तजहि पावहि पद निर्वान'
करहु कल्प भरि राज्य तुम, मोहि सुमिरहु मन माहि।
पुनि मम धाम जाइहहु, जहाँ संत सब जाहि॥
'अपत अजामिल गज गनि काऊ, भये मुक्ति हरि नाम प्रभाऊ।

रुप– राम कृपा बैकुण्ठ सिधारा ( शरभङ्ग )
'गीध गयउ हरि धाम, ताहि देइ गति राम उदारा।'
'देहि राम तिनहू निज धामा ( कवन्ध )
'राम बालि निज धाम पठावा।'
तुमहु दियो निज धाम राम नमामि राम निरामयं।

लीला–रघुबंश भूषण चरित यह, नर नारि सुनहि जे गावहीं।
कलि मल मनोमल धोइ, विनु श्रम राम धाम सिधावहीं।
राम चरन रति जो चहइ अथवा पद निर्वान।
भाव सहित सो यह कथा करइ श्रवन पुटपान॥

धाम– मम धामदा पुरी सुख राशी। अवध तजे तनु नहि संसारा।
राम धामदा पुरी सुहावनि।

१२— चारों भक्तों के दैहिक दैविक और भौतिक तीनों तापों के नाशक हैं।

नाम– जासु नाम त्रै ताप नशावन।

रुप– श्याम गात सरसीरुह लोचन, देखौं जाइ ताप त्रै मोचन॥
सुभग सोन सरसीरुह लोचन। बदन मयंक ताप त्रय मोचन॥

लीला–त्रिविध ताप त्रासक त्रिमुहानी॥
सुनु खग पति यह कथा पावनी। त्रिविध ताप भवदाप दावनी॥

धाम– 'पुनि लखु अवध पुरी अति पावनि।
त्रिविधि ताप भव दाप नशावनि॥'

१३— चारों के साधक अर्थात नाम के जापक रुप के ध्यान करने वाले लीला के गाने सुनने वाले और धाम में बसने वाले श्रीराम जी को अति प्रिय है।

नाम– तुम पुनि राम राम दिन राती। सादर जपहु अनंग अराती॥
सन्तत जपत शम्भु अविनाशी, अतः शिव समान नहि कोऊ प्रिय मोरे

रुप— निरखि बदन सब होहि सनाथा,
अतः ममहित लागि जन्म इन हारे। भरतहु ते मोहि अधिक पियारे॥

तुम सारिखे सन्त प्रिय मोरे, धरौं देह नहि आन निहोरे ॥
पुलक गात हिय सिय रघुबीरु। जीह नाम जप लोचन नीरु ॥
अतः भरत सरिस को राम सनेही। जग जप राम राम जप जेही ॥
लीला–मम गुण गावत पुलक शरीरा। गदगद गिरा नयन बह नीरा ॥
अस सज्जन मम उर बस कैसे। लोभी हृदय बसत धन जैसे ॥
धाम– अति प्रिय मोहि इहां के वासी ॥
१३– चारों भक्तों को सुख देने वाले है।
नाम– जपहि नाम जन आरत भारी। मिटहि कुसंकट होहि सुखारी ॥
रुप– प्रभु शोभा सुख जानहि नयना, कहि किमि सकहि तिनहि नहि बयना।
लीला– जे सकाम नर सुनहि जे गावहि सुख सम्पति नाना विधि पावहि ॥
धाम– नित नव सुख सुर देखि सिहाहीं। अवध जन्म जाचहि विधि पाही ॥
१४– चारों अकथनीय है
नाम- कहउँ कहाँ लगि नाम बड़ाई, राम न सकहि नाम गुण गाई ॥
रुप– रुप सकहि नहि कहि श्रुति शेषा ॥
लीला–शारद शेष महेष विधि, आगम निगम पुरान।
नेति नेति कहि जासु गुण, करहि निरन्तर गान ॥
होहिं सहस दश सारद शेषा। करहि कल्प कोटिक भर लेखा ॥
मोर भाग्य राउर गुण गाथा। कहि न सिराहि सुनहु रघुनाथा ॥
रघुवीर चरित अपार वारिधि, पार कवि कवने लह्यो ॥
धाम– पुर शोभा संपति कल्याना। निगम शेष शारदा बखाना ॥
'पुर शोभा कछु वरनि न जाही'
बाजार रुचित न बनै वर्णत वस्तु बिन गथ पाइये ॥
१५– चारों भगवद्भक्ति देने वाले है।
नाम– नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू, भक्त शिरोमणि भे प्रहलादू ॥
रुप— नाना भाँति विनय तिन्ह कीहीं, अन पायनी भक्ति प्रभु दीन्ही ॥
विदा कीन्ह करुणा यतन, भक्ति विमल वर देइ।
,अविरल भक्ति माँगि वर, गीध गयउ हरि धाम।'
लीला– सुनहि विमुक्त विरत अरु विषई, लहहि भक्ति गति सम्पति नई ॥
मुनि दुर्लभ हरि भक्ति नर पावहि विनहि प्रयास।
जे यह कथा निरन्तर सुनहि मानि विश्वास ॥
धाम– पुरी प्रभाव अनुग्रह मोरे। राम भक्ति उपजहि उर तोरे ॥

१६- चारों से प्रेमाश्रु प्रगट होते है—

नाम- राम राम रघुपति जपत, श्रवत नयन जल जात।
जीह नाम जप लोचन नीरु ॥

रुप- करत दण्डवत मुनि उर लाये। प्रेम वारि दोउ जन अन्हवाये ॥

लीला-मम गुन गावत पुलक शरीरा। गदगद गिरा नयन वह नीरा ॥

धाम- जब जब राम अवध सुधि करहीं। तब तब वारि विलोचन भरही।

१७- चारों एक साथ ही चारों फलों के देने वाले है।

नाम- सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू। लोक लाहु परलोक निवाहूं ॥
राम नाम काम तरु देत फल चारि रे ॥ वि. प. ६७ ॥

रुप- करतल होहिं पदारथ चारी। तेइ सिय राम कहेउ कामारी ॥

लीला-बरणउँ रघुपति विशद यश, जो दायक फल चारि ॥

धाम- शुक पिक मधुकर मुनिवर विहार, साधक प्रसून फल चारि चार।वि २३

१८- चारों कल्प तरु वत है

नाम- नाम राम को कल्प तरु, कलि कल्याण निवास।

रुप- ध्यान सकल कल्याण कर, सुर तरु तुलसी तोर।

लीला-अभिमत दानि देव तरु वर से।

धाम- कामद मणि कामदा कल्प तरु ॥ वि० २४ ॥

१९- चारों काम धेनु वत है -

काम धेनु काम तरु मोसे छीन धाम को ( कवि० १८७ )

रुप- सुनु सेवक सुरतरु सुरधेनु। विधि हरि हर वंदित पद रेनू ॥

लीला-राम कथा कलि कामद गाई।

धाम- काम धेनु महि विटप, कोउ विधि वाम न लाये। ( गी० )

२०- चारों सुन्दर है।

नाम- राम नाम अंकित अति सुन्दर।

रुप- सुन्दर श्याम गौर दोउ भ्राता।

लीला-राम चरित सर सुन्दर स्वामी।

धाम। पुर चहुं पास कोट अतिसुन्दर।

२१– चारों सुठि सुन्दर हैं–

नाम– कहत सुनत सुमिरत सुठि नीके

रुप– सुठि सुन्दर सुकुमार दोउ, जनक सुता सुकुमारि ।

लीला–सांवर सखी सुठि लोना
सुठि सुन्दर सम्बाद वर, विरचेउ बुद्धि विचारि ।

धाम–राजघाट सबही विधि सुन्दर

२२– चारों के अधिकारी सुकृती ही है ।

नाम–'सुकृती साधु नाम गुण गाना ।'

रुप– 'केहि सुकृती सन होइहि साथा ।'

लीला–'कहहिं सुनहिं हर्षहिं पुलकाहीं, ते सुकृती मन मुदित नहाहीं ।'

धाम– 'हम सब सकल सुकृति की राशी, भे जग जनमि जनक पुरबासी ।

२३– चारों भव सरिता की नाव हैं

नाम– घोर भव वारि निधि नाम निज नाव रे ।

रुप– यत्पादप्लव मेकमेव भवाम्भोधेस्ति तीषवतां ।

लीला–करौं कथा भव सरिता तरनी ।

धाम– सन्त–तिनके हृदय कमल महं करौं सदा विश्राम
अतः–भवसागर कहं नाव शुद्ध सन्त तिनके चरन

२४– श्रीराम चरित में यह और विशेषता है कि चारों मे प्रत्येक को अन्य तीन का साधन बतलाया है ।

नाम रूप का साधन है, रुप साध्य है–
'देखिय रुप नाम आधीना, रुप ज्ञान नहिं नाम विहीना ।
'सुमिरि पवन सुत पावन नामू, अपने वश करि राखेउ रामू ।

नाम लीला का साधन है, लीला साध्य है–
'सुमिरि सो नाम राम गुण गाथा । करौं नाइ रघुनाथहिं माथा ।'

नाम धाम का साधन धाम साध्य है ।
'जपत अजामिल गज गनि काऊ, भये मुक्त हरि नाम प्रभाऊ ।
राम राम कहि तनु तजहिं, पावहिं पद निर्वाण ।'

रूप नाम का साधन नाम साध्य है–
पंपा सरोवर पर जब महर्षि नारद जी ने रुप (स्वयं श्री राम जी) को प्राप्त करके भी नाम रुपी चन्द्रमा को भक्तों के हृदयाकाश में बसाना

या अपने पास निरन्तर प्राप्त करना माँगा था तब रुप साधन न हुआ तो और क्या हुआ ।

राका रजनी भक्ति तव, राम नाम सोइ सोम ।
अपर नाम बहु गुण विमल, बसहु भक्त उर व्योम ॥

रुप लीला का साधन है लीला साध्य है–

'भक्ति ज्ञान विज्ञान विरागा । योग चरित्र रहस्य विभागा ॥
जानब तै सबही कर भेदा । मम प्रसाद नहि साधन खेदा ॥'

रुप धाम का साधन है धाम साध्य है :-

राम बालि निज धाम पठावा, देहि राम तिन्ह कहँ निज धामा ।

लीला नाम का साधन नाम साध्य है

मुनि दुर्लभ हरि भक्ति नर, पावहि विनहि प्रयास ।
जे यह कथा निरन्तर, सुनहि मानि विश्वास ।

जब भक्ति पावेगा तब नाम अवश्य ही जपेगा क्योंकि नाम जप भक्ति है।

लीला रुप का साधन रूप साध्य है ·

मम गुण गावत पुलक शरीरा, गदगद गिरा नयन बह नीरा ।
× × × × + × × ×
तात निरन्तर वश मैं ताके ।

लीला धाम का साधन धाम साध्य है -

जे सकाम नर सुनहि जे गावहि । सुख सम्पति नाना विधि पावहि ।,
सुर दुर्लभ सुख करि जग माही । अन्त काल रघुपति पुर जाही ॥

धाम नाम का साधन है नाम साध्य ।

पुरी प्रभाव अनुग्रह मोरे । राम भक्ति उपजहि उर तोरे ॥

धाम रुप का साधन है रुप साध्य है-

अति प्रिय मोहि इहाँ के बासी,
कवनेउ जनम अवध बश जोई । राम परायण सोपरि होई ॥

धाम लीला का साधन है लीला साध्य है-

यहि विधि नगर नारि नर, करहिं राम गुण गान ॥

श्री अवध में बास करने वाले लीला का गान करके ही तो काला क्षेप करते है । तब धाम का निवास गुण गान का साधन नहीं तो क्या हुआ ?

राम लखन रिपु दमन भरत के चरित सरित अन्हवैया ।

तुलसी तव कस अवहुँ जानिये, रघुवर नगर बसैया। (गीतावली)

२५- श्री राम जी के धाम ( श्री अवध ) रुप लीला और नाम का माहात्म्य सातों काँड में समान रुप से सर्वत्र गाया गया है कुछ दिग्दर्शन ये है।

१- बालकाण्ड-

नाम-वन्दौ अवधपुरी अति पावनि

रुप- रुप सकहिं नहिं कहि श्रुति शेषा, सो जानै जिन्ह आँखिन देखा।

नाम-चहुँ युग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ। कलि विशेष नहि आन उपाऊ॥

लीला-बाल चरित अति सरस सुहाये। शारद शेष शम्भु श्रुति गाये॥

सिय रघुबीर बिवाहु, जे सप्रेम गावहि सुनहिं।
तिनके सदा उछाह मंगला यतन राम यश॥

अयोध्या काण्ड

धाम- जब जब राम अवध सुधि करहीं, तब तव वारि विलोचन भरही।

रुप- खग मृग मगन देखि छबि होहीं, लिये चोरि चित राम बटोही।

नाम- राम नाम महिमा सुर कहही, सुनि सुनि अवध लोग सुख भरही।

लीला-कहेउँ राम बन गमन सुहावा।

भरत चरित करि नेम, तुलसी जे सादर सुनहि।
सीय राम पद प्रेम, अवसि होइ भव रस विरति॥

अरण्य काण्ड-

धाम-अवध नृपति दशरथ के जाये। पुरुष सिंह बन खेलन आये॥

( यहाँ दशरथ नृपति की विशेषता अवधसे )

रुप- यद्यपि भगिनी कीन्ह कुरुपा। वध लायक नहि पुरुष अनूपा॥

नाम- राका रजनि भक्ति तब, राम नाम सोइ सोम।

अपर नाम उडुगण विमल, बसहु भगत उर व्योम।

लीला-रावणारि यश पावन, गावहि सुनहि जे लोग।

राम भक्ति दढ़ पावहि, बिनु विराग जप योग।

किष्किन्धा काण्ड

धाम- कोशलेश दशरथ के जाये। (कोशलेश से धाम की प्रशंसा की)

रुप- "पुरुष युगल बल रुप निधाना। मृदुल मनोहर सुन्दर गाता॥

नाम–धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीराम नामामृतम् ।
लीला–भवभेषज रघुनाथ यश सुनहिं जे नर अरु नारि ।
तिनके सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिपुरारि ॥

सुन्दर काण्ड

धाम–'प्रविशि नगर कीजै सब काजा, हृदय राखि कौशल पुर राजा ।
'सुमिरि अवध पति परम सनेही ।'
रुप– सुनि प्रभु वचन विलोकि मुख, हृदय हर्ष हनुमन्त ।
हृदय में हर्ष का कारण मुख (रुप) का देखना ।
नाम–राम नाम बिनु गिरा न सोहा, देखु बिचारि त्यागि मद मोहा ॥
लीला–सकल सुमंगल दायक, रघुनायक गुन गान ।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव- सिन्धु बिना जलयान ।

लंका काण्ड

धाम–पुनि देखु अवधपुरी अति पावनि, त्रिविध ताप भव दाप नशावनि ।
रुप– देखन कहँ प्रभु करुणा कन्दा, प्रगट भये बहु जलचर वृन्दा ।
प्रभुहिं विलोकहिं टरहिं न टारे, मन हर्षित अति भये सुखारे ।
'लोचन सफल करौं मैं जाई ।
नाम–यह कलिकाल मलायतनु, मन करि देखु विचार ।
श्री रघुवीर नाम तजि, नाहिन आन अधार ॥
लीला–यह रावणारि चरित्र पावन, राम पद रति प्रद सदा ।
कामादि हर विज्ञान कर, सुरसिद्ध मुनि गावत मुदा ॥
समर विजय रघुवीर के, चरित जे सुनहिं सुजान ।
विजय विवेक विभूति नित,

उत्तर काण्ड

धाम–'कवनेहु जन्म अवध बस सोई, राम परायण सो फुर होई ।
अवध प्रभाव जान तव प्राणी, जब उर बसहि धनु पानी ॥
रुप– 'जय सगुन निर्गुण रुप, रुप अनूप भूप शिरोमने ।
रुप राशि नृप अजिर विहारी ।'
नाम–तीरथ अमित कोटि शत पावन, नाम अखिल अघ पुंज नशावन ।
लीला–रघुबंश भूषण चरित यह, नर नारि सुनहि जे गावहिं ।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम, राम धाम सिधावहीं ॥

पुण्यं पापं हरं सदा शिवकरं, विज्ञान भक्ति प्रदं, माया मोह मलापहं।
सुविमलं प्रेमाम्बु पूरं शुभम्। श्रीमद्राम चरित्र मानसमिदं।
भक्त्याऽवगाहन्तिये ते संसार पतंग, घोर किरणोर्दध्यन्ति नो मानवाः

२६- श्री हरि का नाम रूप लीला और धाम चारों ही भक्ति के अंग है। पर मानस में आवरण वन्दना के बाद सर्व प्रथम धाम की ही वन्दना की गई है। तब नाम रुप लीलादि की इसका कारण यह है कि धाम में ही रूप का प्राकट्य होता है कि धाम में नाम पड़ता एवं लीला का भी आरम्भ धाम से ही होता है और भी कारण है अर्थात भगवन्नाम का जापक भगवद्रूप का दर्शक भगवद्रूप का ध्यापक एवं भगवत्लीला का दर्शक सहयोगी गायक तथा श्रोता आदि को श्री रामजी ने अति प्रिय नहीं कहा। पर धाम वासियों के लिये अपने मित्रों से जिनमें कि नाम जापक लीला के सहयोगीदर्शक गायक श्रोता एवं रुप के प्रत्यक्ष दर्शक सेवक सभी थे उनके सामने से उन्मुक्त कण्ठ से कहा कि-

'अति प्रिय मोहि इहां के बासी।' जन्म भूमि मम पुरी सुहावनि।

इसी से कबि ने भी अन्तरंग वन्दना में सर्व प्रथम धाम की वन्दना करके धाम वासियों की वन्दना किया।

वन्दौ अवध पुरी अति पावनि।
प्रणवौं पुर नर नारि बहोरी, ममता जिन पर प्रभुहि न थोरी।

पुरी का ही प्रभाव है-

'गुणातीत सचराचर स्वामी।'

को भी रुप ग्रहण करके प्राकृत शिशु की चेष्टा करनी पड़ती है, यही नहीं पुरी में प्रवेश करते ही-

विकटानन विशाल भयकारी।

वानर भालु भी परम कमनीय रुप प्रभु के समान सुन्दर द्विभुज श्याम सुन्दर रुप पा जाते है-

हनुमदादि सब वानर वीरा। धरे मनोहर मनुज शरीरा॥

और विशेषतः की बात तो यह है कि नाम रुप और लीला इन तीनों का लाभ तो केवल जाग्रता वस्था में ही सम्भव है। अतः चारों के सच्चिदानन्द होते हुये भी धाम निवास सर्वथा एवं सर्वदा सर्व श्रेष्ठ है तभी तो कहा गया है कि

धन्य अवध जेहि राम बखानी।

नाम, रूप, लीला और धाम चारों का अथवा चारों में किसी एक का ही उपासक एकान्तिक तन्निष्ठ कभी किसी का अपेक्षा नहीं करता –

तीन तक कौपिन में अरु भाजी विनु लोन ।
तुलसी रघुबर उर बसै इन्द्र वापुरो कौन ॥
राम अमल माते रहे पीवै प्रेम निसंक ।
आठ गाँठ कौपीन में इन्द्र को रंक ॥

इस तरह के राम अमली फकीर का 'शाह नामा' लिख विराम लेता हूँ ।

# कालजयी ऋषि के चरणों में

दुर्दिन राष्ट्र-धरा पर आया, छाया तम का प्रान्त
झुका राष्ट्र-ध्वज, प्रिय स्वदेश का मन हो गया अशान्त
जो गज की पुकार पर आता था दौड़ा भगवान
बना क्षीर सागर शायी था, दे न रहा था कान
त्राहि-त्राहि धरती करती थी, काँप रहे थे देश
कैसे त्राण धरा का होगा, संस्कृति का 'अखिलेश'!
जीवन धारा को अमृत-घट सौंप शक्ति दे मान
प्रभु ने धरती पर तुमको तव भेजा दे वरदान
संस्कृति से सूनी-सूनी जो हुई धरा थी ध्वान्त
असहनीय पीड़ा से अहरह बनी हुई जो क्लान्त
उसे विराट भाव के दर्शन से देकर अभिराम
'सियाराम मय सब जग' वाली सौंपी दृष्टि ललाम
उसके 'मानस' से जग का मल ऐसा हुआ विलीन
रह न गया 'बेचारा' बन कर छिपा कहीं हो दीन
मानवता का महाकाव्य दे, सौंपा अमृत-निधान
जिसमें युग-युग तक युग लेगा नूतन जीवन गान
'अवधी' धन्य हुई है तुमसे व्रजभाषा अम्लान
संस्कृत ने महिम्न पद पाया भू ने शाश्वत गान
ऋषे ! अदृश्य पदों में तेरे ये सुमनों के हार
गूँज रहे हैं उर-वीणा के ये श्रद्धा से तार ॥

:– वेदप्रकाश द्विवेदी 'प्रकाश'

# 'तुलसी' और 'राम'

—भानुदत्त त्रिपाठी 'मधुरेश' ( उन्नाव )

'तुलसी' कवि का नाम नहीं, 'भारत का भाग्य-सितारा' है
जिसने 'मानस' में मानव का प्रेयोश्रेय सँवारा है।
भारत-जन की सुप्त चेतना जिसने फिर झकझोर दिया,
अहंजन्य मतवादोंके घट जिसने फौरन फोर दिया,,
किकर्तव्य ? देश को जिससे फिर से मिला सहारा है। तुलसी···।

'रतना' ने जिसको ठुकराया उसे अहो ! 'अवधेश' मिला,
'सियाराममय सब जग जानो' का अनूप संदेश मिला,,
स्वयं तर गया भवसागर से औ असंख्य को तारा है। तुलसी····।

तुलसी को पावन वाणी की अपनी अलग निशानी है,
आज यहीं क्या ? भूमण्डल में फैली राम कहानी है,,
जिसके आगे दानवता का रावण हरदम हारा है। तुलसी···।

यदि उनके आराध्य ब्राह्मणों को संपूज्य बताते हैं,
वे 'तुलसी के राम' निषादों को भी गले लगाते हैं,,
'जाति नहीं गुण-प्रेम पूज्य हों' यह मानस का नारा है।तुलसी···।
अगर न होते राम, अभागे तुलसी का तब क्या होता,
तुलसी होते नहीं, राम का यह भविष्य फिर क्या होता,,
जिसने राम कथा का सौरभ चारों ओर पसारा है। तुलसी···।
रतना के 'संपूर्ण-त्याग' से तुलसी 'तुलसीदास' बने,
तुलसी और राम से विरहित भक्ति-लोक 'बेचारा' है।तुलसी····।
हैं अनेक कवि नाम जगत में तुलसी 'अलग-अनुठे' हैं,
तुलसी के भावों के आगे शेष सभी ज्यों जूँठे हैं,,
जिसने उनमें किया 'निमज्जन' उसको मिला 'किनारा' है।तुलसी···।
मानस का 'अमृत' भुँठलाकर विष पीते मरने वाले,
मानव होकर भी दानव हैं जन का सुख हरने वाले,,
तुलसी धन्य, धन्य तुलसीश्वर जिनका वैभव सारा है।
तुलसी कवि का नाम नहीं, वह भारत-भाग्य सितारा है॥

'अवध-अर्चना' से

# श्री अयोध्या जी

ले० महान्त श्री नृत्य गोपालदासजी श्रीमणिरामदास जी की छावनी, अयोध्या

संसार में विभिन्न स्थलों का वैशिष्टय वैचित्री प्रकृति की अनूठी देन है उसी में धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थल भी एक कड़ी के रूप संजोये गये हैं। श्री अयोध्या पुरी को दोनों गौरव प्राप्त हैं। सृष्टि के आदि सृष्टा एवं नियामक भगवान् मनु ने सर्व प्रथम अयोध्या जी का निर्माण किया "मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम्"। वेदों में भी अयोध्या का वर्णन प्राप्त है-

श्री मद्वाल्मीकि रामायण के अनुसार कोशल नाम के जनपद में समस्त धन धान्य से पूर्ण अयोध्या नाम की महा नगरी है। यह बारह योजन लम्बी और तीन योजन चौड़ी है। महा भारत एवं श्री मद्भागवत आदि पुराणों में श्रीअयोध्याजी का माहात्म्य कहा गया है। कालि दास प्रभृति संस्कृत वाङ्मय के महा कवियों ने बड़ी श्रद्धा के साथ अयोध्या जी का सादर स्मरण किया है।

भगवान् बुद्ध एवं उनके अनुयाइयों की तपोभूमि के रूप में मणिपर्वत का क्षेत्र ऐतिहासिकों ने स्वीकृत किया है। जैनों के आदि तीर्थङ्कर भगवान् ऋषभदेव एवं अन्य कई तीर्थङ्करों की जन्म भूमि अयोध्या बतायी गयी है। सिख धर्म के प्राचीन पवित्र स्थलों में अयोध्या जी को माना गया है। इतनाहीं नहीं मुसलमानों के पीर, औलियाओं ने पवित्र भूमि के रूप में अयोध्या जी को मानकर यहाँ निवास किया है।

इस प्रकार प्राचीन काल से सभी धर्मानुयाइयों से सेवित अनुपम इस पुरी का वैशिष्टय सर्वमान्य है। गोस्वामी श्री तुलसी दास जी ने विश्व विख्यात अमर कृत का सृजन "तुलसी चौरा" नामक पुण्य स्थल पर किया है। अनेकानेक सिद्ध विभूतियां, कवि एवं विद्वान् इस पावन भूमि पर हुए हैं।

नवागत दर्शनार्थी प्राचीन स्मृतियों का अवलोकन करना चाहता है परन्तु मिलता है दासता से आबद्ध इसका जीर्ण-शीर्ण स्वरुप। लगता है जो चिर यौवना थी आज बृद्धा होकर अतीत को ढो रही है। आवश्यकता है कि अयोध्या के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक तत्वों के पुर्न मूल्यांकन की जिसमें शासकीय ध्यानाकर्षण अनिवार्य है। जिसमें जन मानस में इसकी सुखद स्मृति

चिर स्थाई रह सके। आज कतिपय पण्डित मानो इसकी ऐतिहासिकता में भी सन्देह करने लगे हैं। अनादि काल से गौरव गाथा अलङ्कृता को इससे बढ़कर दुख और क्या होगा ? फिर भी कल-कल नादिनी मां सरयू एवं यहाँ के प्रभु पद पराग संस्पृष्ट रजकणों से शान्ति प्राप्त करते हैं।

---

ऐतिहासिक दृष्टि कोण से—

# सरयू एवं उसकी महत्ता

प्रो० विजयकुमार (का० सु० साकेत महाविद्यालय)

प्राचीन एवं अर्वाचीन काल से सरयू नदी का महत्त्व भारत में ही नहीं अपितु विश्व में अप्रतिम रहा है। जिसके तट पर पवित्रतम अयोध्या आदि काल से बसी हुई है। वेद, महाभारत, पुराण, वाल्मीकि रामायण एवं श्री रामचरित मानस में इसका वर्णन उपलब्ध है। प्रथमतया ऋग्वेद में ही तीन स्थलों पर इसका विवेचन मिलता है जिसमें इनकी महिमा पर विशेष प्रकाश डाला गया है जो कि इन तथ्यों से स्पष्ट है कि सरयू पार करने वाले तुर्वशों एवं यदुओं से चित्ररथ और अर्ण पराजित हो गये।

उत त्यासद्यआर्या सरयोरिंद्र पारतः।
अर्णाचित्ररथा वधीः ॥ ऋ० ४।३०।१८

सरस्वती एवं सिन्धु नदी के साथ भी इसका उल्लेख आया है जहाँ इसकी महत्ता अक्षुण्ण रूप में मिलती है।

श्यावाश्व ऋषि कहते हैं—

मा वो रसानितभा कुभा क्रुमुर्मावः सिंधुर्नि रीरमत्।
मा वः परि ष्ठात्सरयुः पुरीषिण्यस्मे इत्सुम्न मस्तुवः ॥ ५।५३।९।

इन स्थलों का अनुशीलन यह व्यक्त करता है कि सरयू की उस आदितम युग में विशेष महत्ता थी। आध्यात्मिक एवं भौतिक-आकांक्षाओं की पूर्ति इनकी आराधना से की जाती रही हैं। गय ऋषि ने वैश्वदेव सूक्त में माता, देवी, मधु, घी एवं महनीया रुप में इनकी अर्चना की गयी है—

सरस्वती सरयुः सिंधुरुर्मिभिर्म हो महीरवसा यंतु वक्षणीः।
देवीरायो मातरः सूदियत्नवो घृत्वत्पयो मधुमन्नो अर्चत ॥

मैंक्डॉवेनल एवं कीथ के अनुसार वैदिकोत्तर काल में अवध की एक नदी आधुनिक सरयू का नाम है। त्सिमर[1] का कथन है कि वेदों में उल्लिखित सरयू इसी का ही वर्णन करता है।

हाप्किन्स की धारणा है कि सरयू को पश्चिम में ढूँढना चाहिए परन्तु यह विचारधारा सत्य नहीं है। लुडनिग इसे कुरुम के साथ समीकृत करते हैं परन्तु यह भी न्याय संगत नहीं कहा जा सकता। इसी तरह विवियन ड सेन्ट मर्टिन ने इसे शुतुद्री से समीकृत किया है जो कि पूर्णतया युक्ति संगत नहीं है।

भारतीय आर्ष ग्रन्थों में इसका जो रुप मिलता है इससे यह प्रज्ञापित होता है कि सरयू नदी वास्तव में मोक्ष प्रदायिनी है। सरयू की कल कल निनादिनी धाराओं की छटाओं को निर्निमेष नयनों से अवलोकन करने पर यह मनोभाव जागृति होते हैं कि इस जल में तेजपुञ्ज, वीर्य, शक्ति, ज्ञान, आध्यात्मिक चरमोत्कर्ष, मधु घी, एवं अगाध शक्ति और सम्पदाओं का भण्डार विद्यमान हैं। इसी से सानिध्यता प्राप्त मानव अपने ऐहिक सुखों को विस्मृति कर अलौलिक रुप में डूब जाता है। आचार्यवर गोस्वामी तुलसी दास जी ने बालकाण्ड में ही "सरजू सरि कलि कलुष नसावनि" बताया है। श्री भरतलाल जी द्वारा रचित राजा दशरथ की चिता का स्वरुप सरयू की महिमा से ऐसा प्रतीत होता था कि मानों स्वर्ग की सुन्दर सीढ़ी हों। "सरजू तीर रचि चिता बनाई। जनु सुरपुर सोपान सोहाई।" यह कहा जा सकता है कि-यह सरयू पाप से पुण्य, दुख से सुख अपकृत से सुकृति, नास्तिक से आस्तिक, अयज्ञिय से यज्ञिय, अशान्ति से शान्ति, तेज विहीनता से तेज पुंजता, हिंसा से अहिंसा, राजसी एवं तामसी वृत्तियों से सात्त्विकता और दान, दम, स्वाध्याय एवं तप की ओर उन्मुख करती है। इससे स्पष्ट है कि सम्पूर्ण सुखों का सारतत्त्व इसमें समाहित है। मेरा मन्तव्य है कि आधुनिक मानव श्रद्धा एवं विश्वास के साथ सरयू की धाराओं में यदि अवगाहन करें तो वह अलौकिक शक्तियों का लाभ प्राप्त कर सकता है।

---

१— आल्टिन्डिशे लेवेन १७, ४५
तु० की मूडूर संस्कृत टेक्सटस + + + +
मैंक्समूलर से बु० ई० ३२।३२३

सारा भार प्रधान मंत्री जगन्नाथप्रसाद तथा उनके सहायक मंत्री श्री ब्रजमोहन प्रसाद जी श्री भुवनेश्वर दयाल जी के ऊपर था । महिलाओं की देखरेख सहायक मंत्री श्रीमती विमला सहचरी कर रही थीं।

अन्तिम दिन प्रधान मंत्री ने पटना सिटी के श्री राधेश्याम सर्राफ की शुभकामना पढ़ सुनायी और सभी को हृदय से धन्यवाद ज्ञापन किया । इसके बाद श्री दिव्यकला कुन्ज में रहने वाले विद्यार्थियों ने "भक्त ध्रुव" नामक नाटक का अभिनय किया, जिसकी भूरिभूरि प्रशंसा हुई ।

अब अगला (७१वां वार्षिक) महाधिवेशन आगामी दिसम्बर मास के अन्तिम सप्ताह में बिहार राज्यान्तर्गत भोजपुर जिले के श्रीपतिपुर चातर ग्राम में होने जा रहा है । प्रस्तुतकर्ता–(जमुना प्रसाद उपाध्याय)

# 'नतोऽहं राम वल्लभाम्'

प्रो० 'अनजान'— साकेत महाविद्यालय

वैयक्तिक धरातल पर रावण के पास बीस भुजाएँ थीं, किन्तु पशुवलाधिक्य के कारण उसमें शक्ति-सदुपयोग का सर्वथा अभाव था, उसके पास आँखे भी बीस थी किन्तु, मदाधिकता एवं अज्ञानतावशात् उसमें दूरदर्शी विवेक पूर्ण दृष्टि नहीं थी । यही हाल उसके दस शिरों का भी था । शिर–बाहुल्य में भी बुद्धिविहीन तथा अकालज्ञ कहा जा सकता है ।

अंधाधुंध दमन, अन्याय, प्रताड़न तथा उत्पीड़न द्वारा समग्र धरती को वशीभूत बनाने की उसकी योजना कितनी निस्सार थी, इसे कौन नहीं जानता ? किन्तु, रावण समझता था कि-'द्विज भोजन मख होम सराधा' में बाधा पहुँचाने से,

छधाछीन बल हीन सुर, सहजेहिं मिलिहहिं आइ ।
तब मारिहउँ कि छाँड़िहउँ भली भाँति अपनाइ ।।बा.का. १८१

किन्तु, ऐसा नहीं हुआ । आतंकवादी राक्षसों ने क्या-क्या नहीं किया?

करहिं उपद्रव असुर निकाया । नाना रूप धरहिं माया ।
जेहि विधि होइ धर्म निर्मूला । सो सब करहिं बेद प्रतिकूला ।।
जेहि जेहि देस धेनु द्विज पावहिं । नगर गाँव पुर आगि लगावहिं ।।
सुभ आचरन कतहुँ नहिं होई । देव विप्र गुरु मान न कोई ।।

इस आतंक एवं प्रपीड़न द्वारा रावण ने पाशविक बलाघातों से संसार को अपनी बीस भुजाओं के वशीभूत कर अपने हिसाब से शासन करना

प्रारम्भ कर दिया। कौन उसका विरोध करता ? कहते हैं उसके सहयोगी ऋषियों–मुनियों को रावण की सामान्य प्रजा समझकर उनसे 'कर' उगाहते थे ? बेचारे ऋषियों के पास क्या था जो राजा को देते ? किन्तु विवश किये जाने पर सबने थोड़ा–थोड़ा रक्त अपनी जाँघ से निकाल कर ' कर ' की रस्म अदा की। ऋषियों के रक्त से एक विशाल घड़ा भर गया। सेवकों ने उस रक्त–भरित घट को त्वरित गति से 'मण्डलीक मनि रावन ' के पास प्रस्तुत किया। देखते ही रावण ने अपनी महानता स्वरूप अपनी मूँछावलियों को सँवारा और अनुभव किया कि अब सब ठीक है। सभी मेरे अधीन हैं। फिर उसने उपेक्षा की दृष्टि से देखते हुए आदेश दिया कि इस गंदे रक्त-कुम्भ को मेरे राज्य के बाहर किसी दूरस्थ प्रदेश में ले जाकर पृथ्वी में गाड़ दो। अनुचरों ने वैसा ही किया रक्त–कुंभ विदेह की नगरी में चुपके से गाड़ दिया गया। किसी को कुछ पता नहीं चला। लोकोक्ति है कि इसी रक्त–कुभ से जगज्जननी सीता की उत्पत्ति हुई।

सीता की उत्पत्ति के विषय में लौकिक मान्यता है कि किसी समय भीषण अकाल की अवस्था में महाराज जनक ने जल वृष्टि की संभावना में रात्रि को हल चलाया। हल चलाते समय हल की 'फाल' रक्त–कुंभ से टकरा गई। रक्त–कुंभ फूट गया और उसमें से एक परम सुन्दरी कन्या का रुदन सुनाई पड़ा। जनक जी ने झट उसे अपनी गोद में उठा लिया। उसका नाम 'सीत' –हल की नोक–से उत्पन्न होने के कारण सीता पड़ा।

सीता, वस्तुत: आर्य–सभ्यता का सुरक्षित पुंजीभूत रूप है जो प्रतीक रूप में उस रक्त–कुंभ में समाविष्ट था। वह आदि-शक्ति, विद्या-माया और सृष्टि के उद्भव, पालन, और संहार की त्रिविधात्मक शक्तियों से सम्पन्न ब्रह्म की परम सहयोगिनी विशिष्ट प्रकृति है। मनु-शतरूपा के समक्ष प्रकट होकर वर देने वाले ब्रह्म के वाम पार्श्व में उसे सहज देखा जा सकता है-

वाम भाग सोभित अनुकूला। आदि शक्ति छविनिधि जगमूला॥
जासु अंस उपजहिं गुनखानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी॥
भृकुटि विलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई॥

इतना ही नहीं, ब्रह्म ने स्वयं अपने अवतार का उद्घोष करते हुए मनु-शतरूपा से स्पष्ट कहा था कि—

इच्छा मय नर वेष सँवारे। होइहऊँ प्रगट निकेत तुम्हारे॥
अंसन्ह सहित देह धरि ताता। करिहउँ चरित भगत सुख दाता॥

जे सुनि सादर नर बड़ भागी । भव तरिहहिं ममता मद त्यागी ।।
आदि शक्ति जेहिं जग उपजाया । सोउ अवतरिहि मोरि यह माया ।।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपनी अनन्य श्रद्धा-समन्वित अलौकिक दृष्टि से सीता के इस अद्‌भुत-अनुपम रूप-स्वरूप का अनेक वार दर्शन किया है जब कि रावण मस्तिष्क, बुद्धि और नेत्राधिक्य के होते हुए भी सीता जी की पहचानने में भयंकर भूलें कर बैठता है । यही नहीं, रावण की पत्नी मन्दोदरी भी राम और सीता को पहचानने में गलती नहीं करती, किन्तु रावण जानकर भी नहीं जान पाता ।

किम्वदन्तियों के आधार पर कथा चलती है कि शङ्कर जी ने परम प्रसन्न होकर रावण को अपना धनुष इस आदेश के साथ दिया था कि किसी भी दशा में इसे मार्ग में, पृथ्वी पर न रखा जाय, अन्यथा यह दुबारा उठेगा नहीं । रावण साभिमान धनुष लेकर कैलाश पर्वत से लङ्का के लिए प्रस्थान करता है । विदेहपुरी तक अति प्रकृति की माया, माया का आकर्षण अथवा विधि का विधान कि उसे विवश होकर धनुष वहीं रख देना पड़ा । शिव के कथनानुसार स्वयं रावण से ही वह धनुष पुनः नहीं उठा । वह उसे वहीं छोड़ लङ्का वापस चला आया । वाद में महाराजा जनक के राज-सदन में वह किसी प्रकार लाया गया जहां एक स्थान पर ज्यों का त्यों पड़ा रहा । कहते हैं एक बार सीता जी ने उस कक्ष की स्वच्छता की और बायें से धनुष को उठाकर दायें हाथ से वहाँ झाड़ू लगाया । यह समाचार जब महाराजा जनक को मिला तो वे आश्चर्य-चकित रह गये । तभी उन्होंने यह प्रण किया कि जो व्यक्ति इस धनुष को उठाकर इसे तोड़ देगा, उसी के साथ सीता का व्याह होगा ।

रावण की पत्नी मन्दोदरी को रावण की इस अदूरदर्शी बुद्धि पर बड़ा तरस आता है और ताव भी, किन्तु बेचारी अबला करे तो क्या करे ? वह राम और सीता का परिचय बार-बार देकर रावण के आत्मबोध को जगाना चाहती है और उसके पौरुष को चुनौती देती हुई कहती है कि—

जनक सभा अगनित भूपाला । रहे तुम्हउ बल अतुल बिसाला ।
भंजि धनुष जानकी बिआही । तब संग्राम जितेहु किन ताही ।।

रावण जैसे शक्तिशाली पुरुष के लिये नारी की यह अत्यंत अपमानजनक चुनौती थी किन्तु, उसके ऊपर इसका भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता । फिर प्रभाव पड़ना होता तो वह उस सभा में जाता ही नहीं उसे तो

पता ही था कि यह वही धनुष था जिसे वह जनकपुर में छोड़ आया था। वह यह भी जानता था कि यह शिव-धनुष उससे दोबारा उठने वाला भी नही और उसने इसे उठया भी नहीं। देखें—'रावन बान छुआ नहिं चापा हारे सकल भूप करि दापा', तथा—'रावनु बानु महाभट भारे। देखि सरासन गवँहिं सिधारे।' बाल २५०) उठाता क्या, धनुष देखते ही वह ताड़ गया होगा कि अरे, यह तो वही शिव धनुष है ? फिर उसने संकेत से बाणासुर को भी समझा दिया होगा कि यहाँ से भाग चलो वर्ना बड़ी बेइज्जती होगी। शिव जी का यह धनुष किसी से भी उठने वाला नहीं। और दोनों चुपके से वहाँ से खिसक गये।

राम ने शंकर के उस धनुष को तोड़ दिया। तोड़ा क्या—'छुअत टूट रघुपतिहि न दोषू।' हुआ भी ऐसा ही। गोसाई बाबा लिखते हैं—लेतु चढ़ावत, खैंचत गाढ़ें। काहु न लखा देख सबु ठाढ़ें। आखिर यह माया का प्रभाव नहीं चमत्कारिकता नहीं तो और क्या है ? राम का ब्रह्मत्व तो इसमें है ही, साथ ही सीता की मायावी महिमा का भी इसमें कुछ कम हाथ नही है।

सीता राम की सहयोगिनी शक्ति है। वह राम को पुष्पवाटिका में देखकर पहचान जाती है और उन पर मुग्ध हो जाती है। वह पुरातन प्रीति के नाते राम को बार-बाव देखना चाहती है, पार्वती-गौरी-मन्दिर में जाकर उनसे राम को पति रूप में प्राप्त करने की औप चारिकता स्वरूप प्रार्थना करती है—'मोर मनोरथ जानहु नीके' और जब राम शंकर का धनुष तोड़ने चलते हैं तो वह तमाम-तमाम देवी देवताओं की प्रार्थन करती है—

मन ही मन मनाव अकुलानी। होहु प्रसन्न महेश भवानी॥
करहु सफल आपनि सेवकाई। करि हित हरहु चाप गरुआई॥
गन नायक बरदायक देवा। आजु लगे कीन्हिउँ तुअ सेवा॥
बार-बार बिनती सुनि मोरी करहु चाप गुरुता अति थोरी॥

और अन्त में—'अब मोहि संभु चाप गति तोरी' कहकर वह अपने मानवीय किन्तु नाटकीय हृदय का परिचय देती है। वैसे होना क्या है, यह सब वह भली भाँति जानती है।

सीता राम के साथ वन-वन विचरती है, राम के उद्देश्य-पूर्ति का वातावरण प्रशस्त करती हैं। नाटकीय तो दोनों हैं। दोनों के सम्पूर्ण

जीवन लीलामय और परम नाटकीय है । वन में राम ने एक दिन उपयुक्त अवसर पाकर सीता से कहा—

सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला । मैं कछु करवि ललित नर लीला ॥
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा । जौं लगि करौं निसाचर वासा ॥—
जबहि राम सब कहा वखानी । प्रभ पद धरि हियँ अनल समानी ।
निज प्रतिबिम्ब राखि तहँ सीता । तैसइ सील रूप सुविनीता ॥
लछिमनहुँ यह मरम न जाना ! जो कछु चरित रचा भगवाना ॥

राम के इस नाटकीय चरित्र का पता माया और ब्रह्म के अतिरिक्त और किसी को नहीं था । लक्ष्मण को भी इसकी कोई खबर नही । किसी तीसरे को इस गोपनीय विषय का पता होता तो नाटक की सारी नाटकीयता समाप्त न हो जाती ।अस्तु, कानों कान इसकी किसी को कोई खबर नहीं ।

और ऐसे मायावीं—युग्गों की नाटकीयता का पता लगाने के लिए रावण नाना प्रकार के परीक्षण करता है । एक बार तो खरदूषण के वध का समाचार पाकर वह निश्चय करता है कि—

सुर नर असुर नाग खग माहीं । मोरे अनुचर कहँ कोउ नाही ॥
खरदूषन मोहि सम वलवंता । तिन्हहिं को मारइ बिनु भगवन्ता ॥
सुर रंजन भंजन महि भारा । जौ भगवन्त लीन्ह अवतारा ॥
तौ मैं जाइ वैर हठि करऊँ । प्रभु सर प्रान तजे भवतरऊँ ॥
होइहि भजनु न तापस देहा । मन क्रम वचन मंत्र दृढ़ एहा ॥

किन्तु, किसी भी दृढ़ निश्चय के साथ मानवीय कमजोरी है कि सन्देह कहीं न कहीं हृदय के किसी कोने में छपा अवश्य रहता है और अवसर मिलने पर तत्काल प्रश्न कर बैठता है कि यदि ऐसा नहीं हुआ तो ? तो फिर कुछ और ही सही । रावण कोई अपवाद नहीं । उसके हृदय में सन्देह तत्काल जनमता है । प्रश्न होता है कि यदि ऐसा नहीं हुआ तो क्या होगा ? सन्देह उत्तर देता है —

जौं नर रूप भूप सुत कोऊ । हरिहउँ नारि जीति रन दोऊ ॥
चला अकेल जान चढ़ि तहँवा । वस मारीच सिन्धु तट जहँवा ॥

रावण की परीक्षा शैली भी कोई आसान नहीं । अत्यन्त गूढ़, मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक है । इसमें कोई भी फँस सकता है । किन्तु माया पति और स्वयं माया से भी क्या माया ? फिर ऐसे कठिन नाटक में सफलता

की क्या आशा ?

राम की एक यह भी विशेषता है कि जो उनकी जितनी परीक्षा लेता है वह उतना ही असफल होता है और नीचे गिरता है। रावण का भी यही हाल होता है। रावण ने सुनियोजित ढंग से मारीच को सोने का मृग बनाया। सीताको प्रभावित करने केलिये बड़ी दूर की सूझ थी उसकी? आखिर वह भी तो 'परम कौतुकी' था! किन्तु खेल में जीत कर भी वह हार गया। सीता ने स्वर्ण मृग देखा, उनका मन ललचा। उन्होंने राम को अनुप्रेरित किया। राम अपनी मायाविनी पत्नी की बात कैसे टालते? धनुष पर बाण चढ़ाया, तरकश कमर से बाँधा और दौड़ चले माया–मृग के पीछे! उनका शुद्ध मानवीय रूप देखकर रावण अपने पूर्व निश्चय पर ठठा कर हँसता है। 'अरे यह तो साधारण राजकुमार से भी गये–बीते हैं, भला कहीं सोने का मृग होता है? 'असंभव हेम मृगस्य जन्मं।' फिर तो रावण की योजना सफल हुई। उसने सीता जी का अपहरण किया। किन्तु, बाजी ऐसी रही कि वह जीत कर भी हार गया अथवा यों कहें कि वह स्वयं मायापति की माया के जाल में फँस गया।

मन्दोदरी ने रावण से अनेक बार कहा था कि–'सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें तव कुल कमल विपिन दुखदाई। सीता सीत निसा सम आई॥ किन्तु, रावण पत्नी की बात कब मानने वाला था। फर उसकी बात मान लेता, सीता को वापस कर देता, तब तो राम और सीता की माया, उनका नाटक गड़बड़ ही हो जाता। अन्ततोगत्वा राम और सीता की मामा विजयिनी होती है और उन्हें अपने लक्ष्य में सफलता मिलती है। असुरों का विनाश हुआ और देवताओं को सीता माता की कृपा से विजय श्री प्राप्त हुई। धरती से अधर्म का नाश हुआ, धर्म का अभ्युत्थान हुआ और भक्तों का परम कल्याण हुआ। इन समस्त क्रिया कलापों में सर्वाधिक श्रेय जगज्जननी सीता को ही है। गोस्वामी जी इसी लिए आदि शक्ति की वंदना करते हुए कहते हैं—

"उद्भवस्थिति संहार कारिणीम् क्लेश हारिणीम्।
सर्व श्रेयस्करीं सीता न तोऽहं राम बल्लभाम्॥"

श्री रामचरित मानस के आदि टीकाकार—
रसिकाचार्य श्री रामचरणदास "करुण सिन्धु" जी महाराज

# एक सादर संस्मरण एवं भावभीनी श्रद्धांजलियाँ

ले० श्री अंगद शरण जी रामायणी श्री जानकीघाट अयोध्या।

श्री भगवत् चरणारविन्द चंचरीक श्री महाराज जी का जन्म जिला-प्रतापगढ़ (उ०प्र०) संवत् १७३० बैशाष पूर्णिमा को ब्राह्मण कुल में हुआ था। ऐसे महान विभूतियों के कुछ विचित्र लंक्षण परिलक्षित होते हैं। वाल्यावस्था से ही आपकी प्रवृत्तियाँ आध्यात्तिमकता को ओर उन्मुख रही और "गृह कारज नाना जंजाला" से सदा के लिये विरक्त होकर श्री अवधधाम पधारें।

आपने परमपावनी सरयू सलिला में स्नान करने के उपरान्त सर्व प्रथम श्रीहनुमानगढ़ी का दर्शन किया और तत्पश्चात एक सन्त से श्री रामप्रसादाचार्य "दीनबन्धु ज महाराज" का निवास स्थान पूछा। स्वयं श्रीरामप्रसादाचार्य जी के शिष्य श्री रघुनाथप्रसाद जी थे। उन्होंने श्री महाराज जी को श्री दींनबन्धु जी का दर्शन कराया, जिनकी आज्ञानुरुप, श्री रघुनाथप्रसाद जी द्वारा आपने वैष्णव पंचसंस्कार की दीक्षाग्रहण किया। माधुर्य उपासना की प्रेरणा श्री रामप्रसाद जी से मिली पुनः रैवासा जाकर उन्होंने स्वामी अग्र जी महाराज द्वारा रचित "अग्र सागर" का अध्ययन किया। अयोध्या लौटकर आपने श्री जानकीघाट चारुशिला वाय का निर्माण किया तथा श्री जानकी रसिक जू की स्थापना करके साधना में लग गये। अवध के नवाब आशुफुद्दौला ने प्रभाबित होकर जानकीघाट की भूमि एवं कई गाँव आपके चरणों में समर्पित कर दिये। आपके प्रवचनादि सुनने के लिये अवध के संतों की भोड़ लगी रहती थी। आप संतों की शीत प्रसादी ग्रहण करते थे। यहीं आपने श्रीरामचरित मानस की आनन्द लहरी टीका किया जो कि मानस की अवधी भाषा में आदि टीका के नाम से विश्रुत है।

श्रीस्वामीजी के रचितअनेक ग्रन्थ उपलब्ध हैं— अमृत खण्ड मानस की टीका आनन्द लहरी, रसमालिका, रामपदावली, सियारामरस-मंजरी, सेवा विधि, छप्पय समापन, जयमाल संग्रह, चरण चिन्ह, कवितावली, दृष्टान्त वोधिक, तीर्थ यात्रा, विरह सतक, वैराग्य शतक, नाम शतक, उपासना शतक, विवेक शतक, पिंगल, अष्टयाम सेवाविधि, काव्य शृङ्गार, झूलन पदावली

अनन्त श्री स्वामी रसिक विभूति

**श्री रामचरण दास जी**

**(करुणा सिन्धु महाराज)**

कौशलेन्द्र रहस्य, राम नवरत्न सार संग्रह" आदि। श्री महाराज जी के मुख्य शिष्य, जिन्होंने रसिक उपासना में विशेष सहयोग दिया- श्री जीवाराम युगलप्रिया, श्री जनक राजकिशोरीशरण 'रसिकअली' और श्री हरीदास थे। मानस के अनन्य उपासक एवं टिप्पणीकार पं० रामगुलाम द्विवेदी (मिर्जापुर) स्वामीजी के साथही साकेत यात्रा का व्रत लिया, जो कि दैवाधीन होते हुये भी पूर्ण ही रहा और अन्त में आप दोनों का साकेत वास १८८८ सं० माघ शु० नवमी को हुआ।

श्री जानकीघाट पर इनके द्वारा संस्थापित-'रसिक पीठ' और "चारुशिला बाग" आज भी इनकी परम्परा को अक्षुण्य बनाये हुये है,

बर्त्तमान गाद्याचार्य श्री मैथिलीरमण शरण जी महाराज इस पीठ के पाँचवे आचार्य हैं। इनके पहले ४ आचार्य और रहे हैं-श्री लक्ष्मण-शरण जी, श्री जानकीशरण जी, श्री सियारामशरण जी और आदि आचार्य स्वयं श्री करुणासिन्धु जी, आज भी श्री महाराज जी के ग्रन्थों पर श्रीजानकी-घाट स्थान में शोध कार्य चल रहा है। उनकी टीका का आधुनिकी-करण भी हो रहा है। भविष्यकाल में "करुणा सिन्धु शोध संस्थान व स्मारक" बनाने की योजना है।

[ अगले अंक में द्वितीय पुष्प पं० श्री रामगुलाम द्विवेदी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विषय में सारगर्भित शोधपूर्ण सामग्री प्रकाशित की जायगी ]

ज्योति ग्रायल मील

फतेगंज-फैजाबाद

शुद्ध सरसों के तेल के निर्माता

# ❀ पद ❀

मन पछितैहै अवसर बीते।
दुरलभ देह पाइ हरि पदभजु, करम, बचन अरु ही ते॥ १
सहसबाहु, दसबदन आदि नृप बचे न काल बली ते।
हम हम करि धन-धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते॥२
सुत-बनितादि जानि स्वारथ रत, न करु नेह सबही ते।
अंतहुँ तोहि तजैंगे पामर ! तू न तजै अबही ते॥३
अब नाथहि अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जी ते।
बुझै न काम अगिनि तुलसी कहुँ, विषय-भोग बहु घी ते॥ ४।

( विनय पत्रिका से )

## आवश्यक सूचना:-

तुलसी सन्देश पत्रिका का प्रथम वर्ष समाप्त है। द्वितीय वर्ष का प्रथमांक आपकी सेवा में सादर प्रस्तुत है।

अतएव आप अपना ग्राहकता शुल्क ११) (ग्यारह रुपया) मात्र नवीन वर्ष हेतु शीघ्रातिशीघ्र भेजने की कृपा करें।

भवदीय:-

मन मोहन सरकार

व्यवस्थापक (तुलसी सन्देश)
श्री मानस सेवा समिति मोहन मन्दिर
अयोध्या, फैजाबाद ( उ० प्र० )

मुद्रक:-मान सरोवर प्रिंटिंग प्रेस, रीडगंज, फैजाबाद